



बिहार साहित्य अकादमी

चेतना

पंचम अंक

नवम्बर, १९९२



शहीद स्मारक, बिहार, पटना

महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) II, बिहार, पटना
का कार्यालय

विवकालाद्यनवच्छिन्नानन्तधिन्मात्र मूर्तये ।
स्वानुभूत्येकमात्राय नमः शान्ताय तेजसे ॥

— नीतिशतकम्

अर्थात्

“समस्त दिशाओं और तीनों कालों में व्याप्त, अविनाशी, ज्ञानमय
मूर्ति वाले, अपना अनुभव ही जिनकी सत्ता का साक्षी है, ऐसे
शान्त और तेजस्वरूप परब्रह्म परमात्मा को नमस्कार ।”

आवरण - परिचय

मुख्य सचिवालय भवन, पटना के पूर्वी प्रवेश द्वार पर सात
पराक्रमी युवक शहीदों की मानवाकार मूर्तियाँ । इन अमर
शहीदों ने सन् 1942 के स्वतन्त्रता संग्राम में सचिवालय भवन पर
भारत के तिरंगे झण्डे को फहराने के क्रम में अपने प्राण उत्सर्ग
किए । यह 'शहीद स्मारक' के नाम से प्रसिद्ध है ।

चेतना

अर्द्धवार्षिक हिन्दी पत्रिका
(पंचम अंक)



लोकहितार्थ मन्वविद्या

कार्यालय

महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) - II - बिहार

पटना - ८०० ००१

स्वत्वाधिकार महालेखाकार (ले० एवं ह०)-II, बिहार, पटना

प्रकाशन : चेतना
अर्द्धवार्षिक हिन्दी-पत्रिका

प्रकाशक : महालेखाकार (ले० एवं ह०)-II बिहार, पटना का कार्यालय, पटना—800001.

अंक : पंचम अंक
नवम्बर, 1992

मूल्य : निःशुल्क

मुद्रक : बिहार राज्य शिक्षक सहयोग संघ लि० प्रेस
एक्जीविशन रोड, पटना - 1

हिन्दी द्वारा सारे भारत को
एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।
—महर्षि दयानन्द सरस्वती

चेतना परिवार

संरक्षक ।

श्री नरेन्द्र सिंह

महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) II, बिहार, पटना

प्रकाशन परामर्शदातृ समिति :

श्रीमती माला सिन्हा

वरिष्ठ उप महालेखाकार, बिहार, पटना

श्री राम सेबक सिंह

उप महालेखाकार, बिहार, पटना

श्री लाला पुरुषोत्तम कुमार राजगृहार

लेखा अधिकारी, बिहार, पटना

संपादक मंडल ।

प्रधान संपादक । श्री सतीश चन्द्र सिन्हा

लेखा अधिकारी

संयुक्त संपादक । श्री नरेन्द्र कुमार सिंह "नाहर"

वरिष्ठ लेखापाल

महालेखाकार का संदेश

हमारे संविधान में हिन्दी को भारत संघ की राजभाषा का स्थान दिया गया है। संविधान के प्रावधानों को सक्रिय करना हम सभी का नैतिक कर्तव्य है। इसमें हिन्दी भाषी जनता का, विशेषकर सरकारी कर्मचारियों का महत्वपूर्ण दायित्व है। इस दायित्व को निभाने के लिए सरकारी कामकाज में हिन्दी को अधिक से अधिक प्रयोग में लाना अत्यावश्यक है। इसके लिए हमारे कर्मचारियों की हिन्दी में लिखने की दक्षता बढ़ाने के लिए हर संभव प्रयास होना चाहिए।

कार्यालय में उपलब्ध सृजनात्मक प्रतिभा की अभिव्यक्ति को बढ़ावा देकर हिन्दी-प्रयोग की उन्नति के लिए, एक सक्रिय माध्यम बनने के लिए "चेतना" को मेरी शुभकामनाएँ।

नरेन्द्र सिंह

महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) -II,

बिहार, पटना।

✱

वरिष्ठ उप महालेखाकार (ले० एवं ह०) जी० ई० एवं पेन्शन, बिहार, पटना

का

सन्देश

हर्ष की बात है कि कार्यालय में राजभाषा हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से अर्द्धवार्षिक पत्रिका "चेतना" का पाँचवा अंक प्रकाशित होने जा रहा है।

पत्रिका के समस्त रचनाकारों ने इसे भावप्रद, ज्ञानवर्द्धक एवं रुचिकर बनाने का पूरा प्रयास किया है। मैं पत्रिका के रचनाकारों एवं सम्पादक-मंडल को हार्दिक धन्यवाद देती हूँ।

माला सिन्हा

वरिष्ठ उप-महालेखाकार (जी० ई० एवं पेन्शन)

बिहार, पटना

उप महालेखाकार (ले० एवं ह०) प्रशासन, बिहार, पटना

का

सन्देश

यह बड़े हर्ष की बात है कि कार्यालय में राजभाषा हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से छमाही पत्रिका "चेतना" प्रकाशित होने जा रही है।

आशा करता हूँ कि यह पत्रिका सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने में सार्थक भूमिका निभाने के साथ ही कार्यालय के कर्मचारियों और अधिकारियों को हिन्दी में काम करने में प्रेरणादायक सिद्ध होगी।

पत्रिका की सफलता के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

राम सेवक सिंह

उप महालेखाकार (ले० एवं ह०) प्रशासन

बिहार, पटना



सम्पादकीय

चेतना का पंचम अंक आपके सम्मुख प्रस्तुत करते हुए मुझे अपार हर्ष हो रहा है ।

‘चेतना’ के प्रकाशन का मूल उद्देश्य केन्द्रीय सरकार की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन में सक्रिय सहयोग प्रदान करना है और इसका लक्ष्य हिन्दी का सरकारी कामकाज में अधिक प्रयोग कर निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति करना है ।

राजभाषा के प्रति अगाध निष्ठा एक पुनीत सद्बिचार है । इस पत्रिका का प्रकाशन इस दिशा में किए गए प्रयासों की एक कड़ी है । इस पावन राष्ट्रीय अनुष्ठान में यह एक प्रतीक-पुष्प ही है जिसे सेवाभाव से पाठकगण को समर्पित करते हुए मुझे परितुष्टि होती है ।

मैं समस्त रचनाकारों और सहकर्मियों का हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने अपनी विशिष्ट रचनाएँ इस पत्रिका में प्रकाशनार्थ भेजी हैं तथा प्रकाशन के क्रम में अपेक्षित प्रत्यक्ष या परोक्ष सहयोग प्रदान किया है ।

इस प्रयास में लेखकों, कवियों, रचनाकारों एवं विचारकों को कितनी सफलता मिली है इसका मूल्यांकन तो सुधी पाठक ही कर पायेंगे । रचनाओं पर विद्वान पाठकों, समालोचकों, शुभचिन्तकों और सहयोगियों के रचनात्मक सुझावों का सुस्वागत है । उनके सुझावों का आदर करते हुए पत्रिका को भविष्य में अधिक से अधिक सम्प्रेषक एवं उपयोगी बनाने का प्रयास किया जायेगा ।

सादर

सतीश चन्द्र सिन्हा



अनुक्रमणिका

बेतना परिवार		३
सन्देश		४
सम्पादकीय		६
अनुक्रमणिका		७
आपके पत्र		८
१. धर्मनिरपेक्षता (सिद्धांत एवं व्यवहार)	(लेख) सतीश चन्द्र सिन्हा	९
२. बादशाह की नेकी	(कहानी) नरेन्द्र कुमार सिंह 'नाहर'	१३
३. शीतिका	(कविता) उमेश्वर प्रसाद सिंह	१५
४. क्षितिज के पार	(कविता) लाला दीनबन्धु प्रसाद सिन्हा	१५
५. फागुनी ब्यार	(कविता) राम बाबू राम	१६
६. पर्यावरण (समस्या और समाधान)	(लेख) श्रीमती कृष्णा दास	१७
७. प्राकृतिक न्याय का सिद्धांत और अनुशासनिक मामलों में इसकी प्रयुक्ति	(लेख) एम. एन. हक	१९
८. हास्य	(हास्य) पुरुषोत्तम कुमार राजगृहार	२२
९. स्वर्ग दो पल का	(कहानी) गुप्ता प्रसाद मधुकर	२३
१०. कड़वी सच्चाई	(कविता) सुश्री सुमन तिग्गा	२४
११. देश भक्ति	(लेख) जाकिर हुसेन	२५
१२. आदि कवि—एक परिचय	(लेख) जे० पी० कर्ण	२६
१३. भारत-वन्दना	(कविता) कुंज बिहारी प्रसाद	२८
१४. चन्द्रमा में कालिमा क्यों ?	(अध्यात्म) सी० एस० पी० वर्मा	२९
१५. जीवन में सदा मुस्कुराना सीखिये	(लेख) नवल किशोर प्रसाद	३१
१६. शिकवा	(कविता) बाल गंगाधर कान्त	३२
१७. इन्सान को इन्सान बनाने के लिए	(कविता) जगन्नाथ प्रसाद मेहता	३३
१८. हुस्न की तारीफ	(कविता) बंशीधर मिश्र	३४
१९. नव-दो-श्वारह	(लघुकथा) एल. डी. पी. सिन्हा	३५
२०. प्रेयसी की पीड़ा	(कविता) ब्रजमोहब प्रसाद	३५
२१. सानेट	(कविता) गिरिजानन्दन	३६
२२. स्वामी विवेकानन्द	(लेख) डा० प्रेमनिवास मिश्र	३९
२३. रूपसी	(कविता) श्याम किशोर प्रसाद	४०
२४. कैश्म का खेल	(लेख) भारत भूषण	४१
२५. राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के लिए १९९२-९३ के वार्षिक कार्यक्रम	(उद्धरण)	४४
२६. टिप्पण वाक्यांश	(संकलित)	४७
२७. गत ग्रीष्म वर्षा ऋतु आई	(लेख) रघुनाथ प्रसाद	४८

पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों से महालेखाकार कार्यालय का सहमत होना आवश्यक नहीं है। रचनाओं की मौलिकता के लिए रचनाकार स्वयं उत्तरदायी हैं।

आपके - पत्र

पत्रिका 'चेतना' के चतुर्थ अंक की प्राप्ति, धन्यवाद ।

पत्रिका में प्रकाशित रचनाएँ काफी रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक हैं ।

इस अंक में प्रकाशित लेख 'हिन्दी एवं राष्ट्रीय एकता', 'भारत का सांस्कृतिक परिवेश' काफी सराहनीय है । पत्रिका की प्रगति के लिए हमारी हार्दिक शुभकामनाएँ ।

ग्वालियर

२९-७-९२

श्रीमती सरोज शर्मा

लेखा अधिकारी, महालेखाकार (ले. एवं ह.)

'चेतना' का चतुर्थ अंक प्राप्त हुआ, धन्यवाद ।

पत्रिका में संकलित समस्त रचनाएँ उत्तम, ज्ञानवर्द्धक तथा रोचक हैं । रचनाकारों की रचना में 'वसुधैवा कुटुम्बकम्' की भावना पठनीय है एवं दिल की गहराई तक छू जाती है । पत्रिका की प्रगति की कामना करता हूँ ।

गुजरात

२२-७-९२

लेखा अधिकारी

भारतीय लेखा तथा लेखा परीक्षा विभाग

हिन्दी पत्रिका 'चेतना' के चतुर्थ अंक के लिए धन्यवाद पत्र ।

पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाएँ सरस, मधुर, ज्ञानवर्द्धक एवं पाठकों के मन में राजभाषा के प्रति चेतना एवं सुरुचि उत्पन्न करनेवाली है । 'चेतना' की उत्तरोत्तर प्रगति के लिए हार्दिक शुभकामनाएँ ।

चण्डीगढ़

१७-७-९२

लेखा परीक्षा अधिकारी

कार्यालय महालेखाकार (लेखा परीक्षा)

हरियाणा, चण्डीगढ़

'चेतना' का चतुर्थ अंक प्राप्त हुआ, धन्यवाद ।

पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाएँ उच्चकोटि एवं साहित्यिक स्तर की हैं । चेतना की सामग्री में काव्य, लेख, कहानी एवं निबन्ध का मनोहारी समावेश हुआ है ।

कलकत्ता

२७-७-९२

लेखा परीक्षा अधिकारी

प्रधान निदेशक लेखा परीक्षा का कार्यालय



धर्मनिरपेक्षता—सिद्धान्त एवं व्यवहार

● सतीश चन्द्र सिन्हा
लेखा अधिकारी

धर्मनिरपेक्षता एक विचारधारा है जो धर्म द्वारा प्रदत्त जीवन तथा व्यवहार के सिद्धान्त से सर्वथा भिन्न दर्शन प्रदान करती है। ऐसे धर्मनिरपेक्ष राज्य में किसी भी व्यक्ति को व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से किसी भी धर्म के पालन की पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त होती है। अर्थात् धर्मनिरपेक्ष राज्य समानता के सिद्धान्त पर आधारित होता है। यह नागरिकों के मध्य उनके धर्म के आधार पर विभेद नहीं करता है साथ ही धर्मनिरपेक्ष राज्य का अपना कोई धर्म नहीं होता है और न किसी धर्म विशेष के प्रसार अथवा अवरोध में सहायक होता है।

राजदर्शन के एक सिद्धान्त के रूप में धर्मनिरपेक्षता तथा जीवन के एक इकाई के रूप में धर्मनिरपेक्ष राज्य का अभ्युदय पश्चिम में हुआ, जहाँ धर्म तथा राज्य के मध्य प्रभुता के प्रश्न पर एक हजार वर्षों के संघर्ष के उपरान्त राजनीतिक, दार्शनिक इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि धर्म तथा राज्य को निश्चय ही अलग कर देना चाहिए। तब धर्म तथा राज्य के मध्य पृथक्करण एक ऐतिहासिक आवश्यकता बन गई जिसकी पूर्ति एक मंद विकासवादी प्रक्रिया के माध्यम से हुई। यह था “रिलीजस लेजेज फेअर” इसकी स्थापना में कई शताब्दियों का समय लगा।

भारत में धर्मनिरपेक्षता की स्थापना एक क्रान्तिकारी प्रक्रिया के परिणामस्वरूप हुई। यद्यपि अलीगढ़ आंदोलन के परिप्रेक्ष्य में धर्मनिरपेक्ष राज्य की स्थापना का उद्देश्य भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस काफ़ी पहले अपना चुकी थी, परन्तु औपचारिक तौर पर इसकी स्थापना स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय संविधान के निर्माण के साथ ही की जा सकी। पश्चिम से सर्वथा विपरीत, भारत में धर्मनिरपेक्षता का उद्देश्य परस्पर विभिन्न धार्मिक मतों के अनुयायियों के मध्य एक प्रकार के मैत्रीपूर्ण तथा भाईचारे की भावना का विकास था। संविधान निर्माताओं को कुछ ऐसा लगा था कि अंग्रेजों के “फूट डालो, शासन करो” की नीति के चलते विकसित साम्प्रदायिकता के रोग की प्रभावकारी औषधि सिद्ध होगी यह भारतीय धर्मनिरपेक्षता नीति। इसका प्रभाव भारतीय संविधान की प्रस्तावना से ही प्रारम्भ होता है जिसमें भारत को एक “सर्वप्रभुता सम्पन्न धर्मनिरपेक्ष तथा समाजवादी गणराज्य घोषित किया गया है। धर्मनिरपेक्षता के विचार से प्रत्यक्षतः अथवा परोक्षतः भारतीय संविधान के अनेक अनुच्छेद सम्बन्धित हैं। अनुच्छेद 15 तथा 16 प्रत्येक नागरिक को बिना किसी धार्मिक भेदभाव के समान नागरिक अधिकार प्रदान करते हैं, अनुच्छेद 15 जो प्रत्येक नागरिक को विवेक की समान स्वतंत्रता तथा किसी धर्म की शिक्षा देने, व्यवहार करने तथा प्रचार करने की स्वतंत्रता देता है। अनुच्छेद 16 जो किसी भी धार्मिक मत को धार्मिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संस्थाओं की स्थापना तथा चल एवं अचल सम्पत्ति क्रय करने का अधिकार देता है। अनुच्छेद 17 जिसके अनुसार किसी भी नागरिक को किसी धार्मिक मत के प्रसार के लिए कर देने हेतु बाध्य नहीं किया जा सकता, अनुच्छेद 15

जिसके अनुसार राज्य द्वारा पूर्ण अथवा आंशिक रूप से संचालित किसी भी शैक्षणिक संस्था में अनिवार्य धार्मिक शिक्षा नहीं दी जा सकती, अनुच्छेद 19 जो शैक्षणिक संस्थाओं में किसी भी प्रकार के धर्म के आधार पर भेदभाव से सम्बन्धित है तथा अनुच्छेद 325, 330 तथा 332 जिनके द्वारा धर्म के आधार पर निर्वाचन क्षेत्रों को समाप्त किया गया है।

इन उपबन्धों के विश्लेषण से प्रतीत होता है कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता मात्र निरपेक्ष नहीं है अपितु यह सापेक्ष है, क्योंकि इन प्रावधानों के अनुसार धार्मिक स्वतंत्रता को समाज की व्यवस्था के हित में प्रतिबंधित किया जा सकता है। अतः यह नीति जड़ न होकर निरन्तर गतिशील है। यह जागृत है क्योंकि यह धर्म को राज्य के कार्यों में हस्तक्षेप के लिए प्रतिबंधित करती है जबकि सामाजिक कल्याण की दृष्टि से राज्य इसमें हस्तक्षेप कर सकता है। राज्य को किसी भी धार्मिक मत के व्यक्तिगत कानून को परिवर्तित करने का अधिकार प्राप्त है। इसका स्वरूप उदारवादी है। यद्यपि भारत मूलतः एक हिन्दू राष्ट्र है, परन्तु संविधान द्वारा न केवल सभी नागरिकों को धार्मिक समानता तथा स्वतंत्रता के अधिकार दिए गए हैं वरन् विभिन्न अल्पसंख्यक समुदाय के अधिकारों की रक्षा के लिए अलग अलग उपबंध रखे गए हैं। उदाहरण स्वरूप अनुच्छेद 25 प्रत्येक नागरिक को किसी भी धर्म की शिक्षा देने, व्यवहार करने तथा प्रसार करने की स्वतंत्रता देता है। इस अनुच्छेद में शब्द "प्रसार" ईसाइयों के लिए अधिक लाभप्रद है क्योंकि इसके अंतर्गत धर्मान्तरण भी कर सकते हैं।

समीक्षात्मक दृष्टि अपनाने पर ऐसा लगता है कि भारत में समानता का निवास स्थान संवैधानिक उपबन्धों तक ही सीमित है जबकि समतावादी समाज, समतावादी राज्य की स्थापना की पूर्व शर्त है। प्रजातंत्र की भावना की भांति ही धर्मनिरपेक्षता की भावना का भी किसी राज्य के जनजीवन में क्रमिक विकास होना चाहिए। वर्तमान समय में साम्प्रदायिक शक्तियाँ भारतीय राष्ट्रीयता तथा धर्मनिरपेक्षता को गंभीर चुनौती दे रही हैं। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद वाले वर्षों में साम्प्रदायिक शक्तियों ने हीकमती कारनामों से अपने को संगठित कर लिया है। ऐसा अवसर उन्हें इसलिए लगा कि आजाद भारत के सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तन की गति नितान्त मन्द रही है। फलतः ग्रामीण तथा नगरीय कमजोर वर्ग के अनेक हिस्से इससे अछूते रह गए हैं और ये साम्प्रदायिक शक्तियाँ बहुत आसानी से वहाँ अपना केन्द्र बना लेती हैं।

मात्र संवैधानिक प्रावधानों द्वारा ही भारत में धर्मनिरपेक्ष राज्य की स्थापना संभव न हो सकेगी। इसका अहसास राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को तुरन्त हो गया था। इसीलिए उन्होंने "मानवमात्र के सार्वदेशिक धर्म" की शिक्षा दी ताकि धर्म को मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारे तथा गिरजाघरों की चहारदीवारी से बाहर लाया जा सके। इनके इन विचारों अथवा प्रयासों का आशय दार्शनिक तथा नैतिक विचारों के राजनीतिकरण से था। गांधी जी आदि से अन्त तक आस्तिक रहे। इनके आदर्शवाद में हम पाते हैं कि उनके विचारों में भारतीय मनुष्यों के दर्शन, सत्य, अहिंसा एवं वसुधैव कुटुम्बकम् का गहरा प्रभाव था, अर्थात् वे वर्गहीन समाज के पक्षधर थे। उन्होंने राम-राज्य की कल्पना की जहाँ सबको रक्षा हो, सबको शान्ति मिल सके, कोई रोक-टोक न हो। वे किसी विशेष वर्ग या धर्म की बात नहीं करते थे। उन्होंने अंतरात्मा की पुकार पर पुरजोर आस्था रखी, चाहे कोई राम, अल्ला, अहूर-मज्दा, बुद्ध अथवा ईसा की उपासना करे सब

एक ही नाम के पर्यायवाची शब्द हैं। महात्माजी की विचारधारा में राहें भिन्न हो सकती हैं। किन्तु उद्देश्य एक था। राम-नाम को बापू इसीलिए "सबसे ज्यादा यकीनी इमदाद" कहते थे। उन्होंने कहा था "ईश्वर का साक्षात्कार करने के लिए मैं बड़ा से बड़ा बलिदान देने को तैयार हूँ। मेरी सारी प्रवृत्ति, मेरा सारा कार्य-फिर यह सामाजिक हो, राजनीतिक हो, मानव दया से सम्बन्ध रखता हो या नैतिक हो, उसी उद्देश्य को सिद्ध करने के लिए है।" श्री राम मनोहर लोहिया ने भी लिखा है कि धर्म दीर्घकालीन राजनीति है, राजनीति अल्पकालीन धर्म है। धर्म जो दीर्घकाल है, अच्छाई करता है और अच्छाई की प्रस्तुति। राजनीति जो अल्पकाल है, बुराई से लड़ती है और बुराई की निन्दा करती है। जब अन्तर बहुत बढ़ जाता है और एक दूसरे से सम्पर्क टूट जाता है तब अच्छे की वस्तु निर्जीव हो जाती है और बुरे की निन्दा केवल कलहप्रियता बन जाती है। यह आवश्यक है कि धर्म और राजनीति एक दूसरे से सम्पर्क न तोड़ें।

भारतवासियों की स्थिति से आप पूर्णरूपेण अवगत हैं कि हमारे देशवासी अत्यधिक धार्मिक हैं और यह एक सच्चाई भी है कि धर्म हमारे जीवन को बहुत जगह घेरता है। थोड़ी कल्पना कीजिए कि यदि पश्चिम बंगाल की मार्क्सवादी सरकार, जो अपने को नास्तिक कहती है और धर्म को जनता का अफीम कहती है, दुर्गापूजा की छुट्टियों में कमी कर दे या ऐसे समारोहों के लिए बिजली, पानी, चीनी आपूर्ति की विशेष व्यवस्था न करे तो क्या होगा ?

संकट की इस घड़ी में राष्ट्रीय एकता आज अहम् सवाल बन गई है। धर्मनिरपेक्ष संविधान ने यह छूट दे रखी है कि हम उपासना के तरीके, भाषा और संस्कृति का चुनाव स्वयं करें। धर्मध्वजी और कुछ विदेशी हममें फिरकापरस्ती उभार कर उसे तोड़ना चाहते हैं। ऐसे में बहुत विवेक और संयम की जरूरत है। परीक्षा की एक घड़ी आज भी उपस्थित है। देश का कण-कण राष्ट्रीय चेतना की लौ जलाते हुए कह रहा है :—

**“वक्त आ गया है आजमाइश का
वतन परस्तों की नुमाइश का”**

अब यही स्थल है जब हमें धर्म के सारतत्व को समझना होगा। धर्म शब्द की उत्पत्ति “ध” धातु से है, जिसका अर्थ है धारण करना। धर्म की पहली परिभाषा है — धारणा धर्ममित्याह धर्मो धारयति प्रजा। अर्थात् जो व्यक्ति और समाज का धारण करे—वह धर्म है। जीवधारियों में मनुष्य की विशेषता यह है कि वह सद्ब्यवहारों में धर्म से अर्थात् विवेक से परिचालित होता है। अतः धर्म ज्ञान-बोध है। जैसे अग्नि का धर्म उष्णता है, वैसे ही मनुष्य का धर्म विवेक है। उष्णता विहीन अग्नि राख है, विवेकहीन नर पशु है। धर्म जब वाणी और लेखनी द्वारा प्रकट होता है, तब वह दर्शन कहलाता है। किसी दर्शन के अनुयायियों का जन-समूह सम्प्रदाय कहलाता है, अपने सम्प्रदाय को श्रेष्ठ तथा दूसरे सम्प्रदाय को हेय समझना साम्प्रदायिकता है। धर्म या दर्शन जब तक व्यक्तिगत अनुभूति का विषय रहता है तबतक स्वच्छ और आत्मकल्याणकारी रहता है, परन्तु जब जन-समूह संघठित करके सम्प्रदाय का निर्माण करता है, तब झगड़ा का वाहक बन जाता है। प्राचीन भारत के धर्मवेत्तागण इस तथ्य से अवगत थे। फलतः उन्होंने लोगों को

धर्म बोध तो कराया परन्तु धार्मिक संघठन अर्थात् सम्प्रदाय नहीं बनाया। प्राचीन वैदिक धर्म सम्प्रदाय और साम्प्रदायिकता से मुक्त होने के कारण शुद्ध रहा फलतः उनकी छत्रछाया में समाज सुख-समृद्धि और शान्ति से चलायमान रहा। मध्ययुगीन सुधार के बाद आधुनिक बुद्धिवाद का प्रादुर्भाव हुआ। धीरे-धीरे धर्मगुरुओं का ह्रास होता गया और शिक्षा में सर्वधर्ममान्य नैतिक मूल्य भी विलोपित होने लगे जो मानव जीवन के अस्तित्व के लिए बहुत सार्यंक थे।

यह एक कठिन कार्य है जिसके लिए सरकार तथा विभिन्न धर्मों की शिक्षा देनेवाले व्यक्तियों के संगठित प्रयासों की आवश्यकता है। अब यह सर्वश्रेष्ठ तरीका होगा कि ये प्रयास नई पीढ़ी से ही शुरू किए जाएं। स्कूलों, कालेजों तथा विश्वविद्यालयों में नैतिक शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

इन सारी चर्चाओं से यह निष्कर्ष निकलता है कि धर्म और धार्मिक अस्मिता, भाषाधी और क्षेत्रीय गर्व या अस्मिता तभी एकताकारी शक्तियां हो सकती हैं जब वे स्पष्ट निर्धारित सीमाओं के भीतर काम करें। जब ये आक्रामक और कट्टर रूप धारण करती हैं तो देश की एकता के लिए खतरा बन जाती हैं। धार्मिक गर्व और भाषाई अस्मिता को सीमा से बाहर नहीं जाने देना चाहिए। हमें भारतीय पहचान और भारतीय अस्मिता को अन्य सभी प्रकार की पहचान से उपर रखना होगा। इन सबका धरोहर भारत का संविधान है।

अंततः हम परमादरणीय महामहिम वर्तमान राष्ट्रपति के हाल में आदि शंकराचार्य के द्वादशशती समारोह के अवसर पर दिए गए भाषणों के अंश से लेख का समापन करना चाहेंगे :—

‘मेरी यह दृढ़ धारणा है कि जो भी विचार मनुष्य से मनुष्य को दूर करता है, मनुष्य, मनुष्य को तोड़ता है, वह चाहे जो भी हो धर्म नहीं हो सकता, क्योंकि धर्म मनुष्य को तोड़ता नहीं, बल्कि जोड़ता है।

धर्म मनुष्य को मनुष्य से इस तरह जोड़ता है कि धर्म, भाषा, क्षेत्र और काल का भेद समाप्त हो जाता है और मनुष्य के बीच अद्वैत की स्थापना हो जाती है। यही धर्म है।’

—:o:—

हिन्दी के पौधे को हिन्दू-मुसलमान दोनों ने सींचकर बड़ा किया है।

—अध्यापक जहूर बक्श

मेरे देश में हिन्दी की इज्जत न हो, यह मैं सह नहीं सकता।

—आचार्य विनोबा भावे

बादशाह की नेकी

नरेश्वर कुमार सिंह "नाहर"

वरिष्ठ लेखकार

एक बादशाह था। उसका नाम था अली खाँ। वह बेहद जिन्दादिल, माकूल और इन्साफ पसन्द ईंसान था। उसकी न्यायप्रियता की दास्तान दूर-दराज मुल्कों तक फैली हुई थी। विशेषकर दूसरों के प्रति बरती गयी नेकी उसकी लोकप्रियता में चार चाँद लगाती थी। साम्राज्यवाद की तमन्ना तो उसमें अवश्य थी, किन्तु साम्राज्यवाद की नीति में लोभ, अनाचार और छल-प्रपंच की बदबू नहीं थी। उसके साम्राज्य का विस्तार उसकी पनाह में आये हुए किसी भी जाति के राजाओं से होता था। उसने जबर्दस्ती किसी राज्य पर हमला नहीं किया। जब किसी छोटे-छोटे राज्य के राजा किसी बड़े राज्य के राजाओं से घिर जाते तो वे बादशाह अली खाँ की शरण में आकर अपनी जान की रक्षा की याचना करते। तब बादशाह शोक-संतप्त राजाओं की पूरी मदद कर उनकी शान-शौकत, इज्जत-आबरू की रक्षा करते थे। इस प्रकार, वीरता और धीरता, शौर्य और साहस तथा इन्साफ के दायरे में उनकी महत्ता की इयत्ता नहीं थी।

बादशाह अली खाँ की हुकूमत में चारों तरफ अमन-चैन, धन-दौलत का वेशुमार खजाना था। प्रजा सर्वथा खुशहाल थी। ऊँची-ऊँची, अभ्रस्पर्शी अट्टालिकाएँ थीं। चतुर्दिक किला की ऊँची दीवारें थीं। सुख-सुविधा के समस्त साधन मौजूद थे। इतना ही नहीं, कला और साहित्य के क्षेत्र में भी कोई उसकी सानी नहीं रखता। बादशाह खुद कला का महान प्रेमी और मर्मज्ञ था। इसके अलावे उसके दरबार में बड़े-बड़े कलाकारों और साहित्यिकों की जमघट थी। युद्ध के मायने में भी उसका मुकाबला लोहे के चने चबाना था। जहाँ-जहाँ उसने लड़ाईयाँ लड़ीं, उसकी जीत हुई। बादशाह स्वयं एक दुर्द्धर्ष योद्धा था। लम्बा-चोड़ा गात। कसी हुई विस्तीर्ण छाती थी। उन्नत ललाट था। भुजाओं में युद्ध के उपकरण थामने की अपूर्व ताकत और मस्तिष्क में निर्णय लेने की अक्षय सामर्थ्य थी।

युद्ध के अतिरिक्त बादशाह ने शान्ति कायम करने के भी विविध सफल प्रयास किये। दूर-दूर देश के राजाओं की विकट समस्याओं का समाधान किया। अपने मुल्क में भी बादशाह दरबारियों के साथ बैठकर विचार-विमर्श कर परिस्थिति जन्य समस्याओं का निराकरण किया करते थे। वह अपनी एक-एक प्रजा का ख्याल रखते थे। वेष बदलकर अपने दरबारियों के साथ वे अपनी प्रजा के दुःख-दर्द का पता लगाते थे और उन्हें दूर करने का हर संभव प्रयास करते थे। किसी के प्रति उसकी बदनीयती नहीं थी। हर के लिए उसके दिल में प्यार-मुहब्बत की रोशनी थी। उसकी नेकी प्रकाशस्तम्भ की नाई जाज्वल्यमान थी।

एक दिन बादशाह पूर्व की तरह अपने दरबारियों के साथ घोड़े पर सवार होकर अपनी प्रजा की वास्तविक स्थिति का पता लगाने निकले थे। संध्या नव-नवोढ़ा दुल्हन की तरह आनी धीमी चाल से अँधेरे का आँचल फैला रही थी। पक्षियों का कलरव वातावरण में अँधकार के फैलने की सूचना दे रहा था। अचानक बादशाह की दृष्टि एक ऐसे व्यक्ति पर पड़ी जिसके बाल बरसात में भीगे पक्षियों की फड़फड़ाहट के

बाद बिखरे पंख के समान थे ! उसकी पोशाक तो जीर्ण-शीर्ण थी, किन्तु उसके संस्कार उन्नत थे । उसके हाथ में पानी से भरा एक बड़ा बोतल था । बादशाह ने कौतूहलवश उसके समीप जाकर उसका परिचय पूछा । जवाब में उस अकिंचन ने पानी से भरा बोतल उड़ेलना शुरू कर दिया । पानी की धारा जमीन पर बहने लगी । बोतल में जब पानी की अल्प मात्रा शेष रह गयी तब उसने उड़ेलना बन्द कर दिया । बादशाह की समझ में यह बात नहीं आ सकी । बगल में खड़े दरबारी अचम्भित दृष्टि से टकटकी लगाकर देखते रह गए । तब तक ओघेरे ने अपना लम्बा वितान तान लिया था । तत्क्षण बादशाह ने अपने दरबारियों को आदेश दिया कि इस भिखारी को राजदरबार में ले चलो जहाँ विस्तार से इस पहेली को सुलझाया जायेगा ।

भिखारी को राजदरबार में बादशाह के सामने हाजिर किया गया । बादशाह ने बड़ी नम्रता से उसकी दुर्दशा का कारण पूछा । उस भिखारी ने अपनी दुर्दशा का कारण स्पष्ट करते हुए कहा “जहाँपनाह, मैं पहले आपकी ही तरह एक राजा था । मेरे शासन-काल में प्रजा सुखी सम्पन्न थी । एक बार किसी अन्य देश के राजा की गिद्ध-दृष्टि मेरे राज्य पर पड़ी । उसने अपनी असंख्य सेना के बाहुबल पर मेरे राज्य पर धावा बोल दिया । घमासान युद्ध हुआ । वर्षों तक भीषण आक्रमण हुए । लाखों की संख्या में मेरे लोग मारे गए । फलतः मेरी सैन्य-शक्ति घटती गयी । धन्य-धान्य की परिपूर्णता ईषत् होती गयी । बचे-खुचे लोग जान बचाकर दूसरे देशों में भाग निकले । अन्ततः मुझे गिरफ्तार कर लिया गया । मेरे समस्त राज्य पर शत्रु-राजा का पूर्ण आधिपत्य हो गया । गिरफ्तारी के पश्चात् मुझे अनेक क्रूर यातनाएँ दी गयीं । यहाँ तक कि जान से मार डालने की धमकी दी गई । मैं किसी तरह शत्रुओं के शिकंजे से भाग निकला । मेरी दुर्दशा तो आप देख ही रहे हैं । मेरी रानी, मेरे बाल-बच्चे कब के मुझसे जुदा हो गए । मुझे मालूम नहीं कि वे लोग जीवित हैं या नहीं ? यह कहकर वह अत्यधिक दुःख-पीड़ा से गलित होकर फूट-फूट कर रोने लगा । बादशाह ने ध्यान से उसकी बातें सुनीं और चुप रहने की सांत्वना दी ।

बादशाह सोचने लगा कि इस राजा की खातिर क्या करना चाहिए ? फिर उसने कहा कि मैं तुम्हें तुम्हारा राज्य वापस करवा देने का वचन देता हूँ । लेकिन, पहले यह बताओ कि तुमने बोतल में एक बूँद पानी क्यों बचा लिया ? प्रत्युत्तर में उस भिखारी ने बादशाह से कहा कि बोतल में एक बूँद पानी बचा लेने का तात्पर्य यह था कि मेरी इज्जत अब पानी की इस एक बूँद की तरह बची हुई है । अब मैं मात्र हाड़-मांस का पुतला हूँ, दीन-हीन हूँ, कैदी हूँ, घोर उपेक्षित हूँ ।

बादशाह अली खाँ ने दूसरे ही दिन उस क्रूर-निष्ठुर राजा पर चढ़ाई कर दी । अपने अदम्य सैन्य-बल और युद्ध-लाघव से उसे बुरी तरह पराजित कर दिया । अन्त में, उस भिखारी को पुनः राज्य-भार सौंप कर उसे राज्य-सिंहासन पर विराजमान कर दिया । बादशाह खाँ ने इस तरह उस पदच्युत राजा को शान-शौकत से जिन्दगी विताने के काबिल बनाकर अपनी विशाल सहृदयता और अटूट न्यायप्रियता के अनु-पम उदाहरण की स्थापना की ।

गीतिका

● उमेश्वर प्रसाद सिंह

दोस्ती ये अमन की कहानी बने,
 इस चमन की मधुर जिन्दगानी बने ।
 भाईचारे का दीपक ये बनकर जले,
 एक स्वर्णिम सुबह की निशानी बने ॥

लोग आते रहें, लोग जाते रहें,
 इस धरा पर सदा मुस्कुराते रहें,
 बस यही एक ख्वाईश मेरी दोस्तो,
 दोस्ती को सदा वो निभाते रहें ॥

रात आई-गई है, सुबह ये नयी,
 अब नई रोशनी से उजाला हुआ ।
 प्यार के फूल दिल के चमन खिले,
 आज हर दिल है पावन शिवाला हुआ ॥

मन में रखना कोई हिचकिचाहट नहीं,
 द्वार दिल के खुले आओ मिल लो गले ।
 पीछे मुड़ के न देखो मेरे दोस्त तुम,
 हम जहाँ भी चलें साथ मिल के चलें ।

**क्षितिज के पार**● लाला दीनबन्धु प्रसाद सिन्हा
लेखा अधिकारी

मन तरंग, ले उठा मुझे तो दूर-गगन में,
 जीवन के मधुमय-वसंत के पावन क्षण में ।

उद्वेलित मन, व्यथित-हृदय था इस धरती पर,
 आशा की किरणें फूट चली अरुण-चल पर ।

नव चेतन नव प्रभात के मधुर क्षणों में,
 विस्मृत कल्पनाएँ जाग उठीं मन-मन्दिर में ।

सर्वत्र मुग्ध हो उठे धरा के जीव-जन्तु,
 ले विदा तिमिर से दूर-प्रकाश-किरणें अनन्त ।

जागृत हुई-अभिलाषा न भ्रम-प्रकाश का अन्त बटोरे
 विस्तृत-नभ से दूर-क्षितिज के पार क्या है ?



फागुनी ब्यार

राम बाबू राय

पवन पुरबईया सबेरे डोल उठी,
पक्षियों में गौरैया प्रातः बोल उठी,
मानव जीवन में फिर आई—
यौवन जैसे अमराई - है ।

ये बसंत का मौसम है सतरंगी,
नयी उमंग और सुधियों के संगी,
हर जीवों में गदराये यौवन की,
उमंग भरी चाह ली अंगड़ाई है ।
फागुनी ब्यार संग —

युवतियों की चूड़ी की खन-खन,
और पग से पायल की रुन-झुन,
उन्मुक्त भोली-सी सूरत,
फिर से वह शहमाई है ।

फागुनी ब्यार आये युवकों के अन्दर
मद-मस्त हो जाते अन्दर-अन्दर
उधर त्रिलो के बन्द टूटकर
लहंगे की पट झूम-झूमकर
फागुनी ब्यार संग —
वेवफा पिया की सुधि ले आई है—॥



पर्यावरण---समस्या और समाधान

श्रीमती कृष्णा बास

वरिष्ठ लेखापाल

औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप गत डेढ़ सौ वर्षों से लगातार प्राकृतिक साधनों के शोषण के कारण पर्यावरण की समस्या खड़ी हो गई है। —आज समस्त विश्व इससे पीड़ित है।

प्रकृति का कण-कण, पल-पल परोपकार में लीन है। लेकिन, मनुष्य अपने तनिक स्वार्थ के लिए उसीका सर्वनाश करने पर लगा है, इतना होने पर भी सम्य मानव का कर्तव्य है कि धरती के स्वास्थ्य को ठीक रखने में सहायक हों। अपने छोटे से स्वार्थ के लिए पेट चीरकर एक ही झटके में सोने का अंडा निकालने का प्रयास न करें, नहीं तो उन्हें जीवन भर पछताना पड़ेगा। गांधीजी के शब्दों में—“प्रकृति के भंडार सबकी अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त है, किन्तु चन्द लोगों के लालच को तृप्त करने के लिए बहुत थोड़े हैं।”

पर्यावरण हमारे चारों ओर मौजूद सजीव तथा निर्जीव वातावरण का नाम है, हर वस्तु जो हमें घेरे हुए है जिसपर हमारा जीवन निर्भर है हमारा घर, कमरे, स्कूल, कार्यालय, परिवार हवा जिसे हम सांस के रूप में ग्रहण करते हैं, वर्षा और सूर्य की रोशनी सभी पर्यावरण में आते हैं। दूसरी ओर परिस्थिति की (Ecology) जीवों के पारस्परिक सम्बन्धों के अध्ययन को कहा जाता है। पर्यावरण इसी की एक शाखा है। परिस्थितिकी ही एक ऐसा विज्ञान है जो प्राणियों की रहन-सहन की स्थिति से सम्बन्ध रखता है, यह जीवधारियों को आपसी सम्बन्ध का ज्ञान कराता है। प्रकृति में यदि मनुष्य अपने कार्यों द्वारा कोई बाधा न डाले तो वह स्वतः अपना सन्तुलन बनाए रखती है।

आज मनुष्य प्रकृति के सौन्दर्य को अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए बिगाड़ रहा है। वातावरण को दूषित कर रहा है। वायु, जिसमें हम सांस लेते हैं, औद्योगिक रसायनों एवं वाहनों के धुएं से प्रदूषित है। तालाव, नदी, और झरने जो हमारे पेय जल के स्रोत हैं दूषित हैं, जंगलों के कटने के कारण भूमि कटाव, उपजाऊ मिट्टी का बहाव और विनाशकारी बाढ़ों का प्रकोप बढ़ रहा है। वन-सम्पदा के नष्ट होने से बहुत से पेड़-पौधों और वन्य-प्राणियों के हमेशा के लिए विलुप्त होने का खतरा बना हुआ है। आज वाहनों, रेलों, वायुयानों और कल-कारखानों की संख्या इतनी बढ़ गई है कि उनके धुएँ से कार्बन मोनो ऑक्साइड काफी मात्रा में निकल रही है। अनुमान लगाया गया है कि 980 किलोमीटर की यात्रा में एक मोटर वाहन में जितनी ऑक्सीजन की खपत होती है उतनी आक्सीजन मनुष्य को एक वर्ष के लिए चाहिए। इसके अलावा कारखानों से हाइड्रोकार्बन, क्लोरिन, अमोनिया आदि गैसें उत्पन्न होती हैं जो वायुमंडल को प्रदूषित करती हैं, वाहनों का शोर, बजते बाजों और ध्वनि विस्तार यंत्रों का कर्णभेदी शोर हवा को चीरते हुए हमारी शान्ति को भंग करते हैं। इनकी तीव्र गति से हमारी शिराएँ झनझना उठती हैं। वायु के समान जल भी प्रदूषित हो

प्रदूषण की समस्या के समाधान के लिए हमें प्रकृति को पूरक मानकर अपने आसपास को साफ रखना होगा। वायु प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए उद्योगों को आवासीय वस्ती से दूर स्थापित करना, उनसे निकलनेवाली गैसों को शुद्ध करके वायुमंडल में छोड़ना, घरों में कुकिंग गैस, गोबर-गैस, अर्थात् धुएँ से रहित चुल्हों के उपयोग से वायु प्रदूषण रोका जा सकता है। जल प्रदूषण को रोकने के लिए सबसे पहली आवश्यकता है, शहरों या गाँवों के मल को तालावों और जलाशयों में नहीं जाने देना, औद्योगिक अवशिष्ट को शुद्ध करके नदियों में छोड़ा जाय, कीटनाशक दवाओं का कम से कम प्रयोग हो।

जल श्रोतों की शुद्धता का ध्यान रखा जाए, परमाणु परीक्षण समुद्र में न किए जाएं। इसी प्रकार भूमि प्रदूषण तभी रुक सकता है जब कूड़े-करकट के ढेर को आग लगाकर नष्ट किया जाय या उन्हें गड्ढों में भरकर ऊपर से मिट्टी डाली जाए। प्रदूषण औद्योगिकरण का सबसे बड़ा अभिशाप है। इससे बचने के लिए मशीनों में “साईक्लेन्सर” लगाये जा सकते हैं तथा सड़कों से दूर मकान बनाये जायें।

अंततः पर्यावरण की रक्षा का समयोचित कारगर हल है—वृक्षारोपण, लोगों को भारतीय संस्कृति के महामंत्र मातृदेवो भवः, पितृदेवो भवः, आचार्य देवो भवः के साथ-साथ तरुदेवो भवः के मंत्र के लिए मानसिक रूप से तैयार करके पेड़ों के महत्व से परिचित कराना होगा, हमें स्मरण रखना है कि पेड़ फूल पत्तों और फलों के बोझ को मानव-कल्याण के लिए ही उठाए हुए हैं—ऐसे श्रेष्ठ तरु को नमस्कार है।



भारत के विभिन्न प्रदेशों के बीच हिन्दी प्रचार द्वारा एकता स्थापित करने वाले सच्चे भारत बन्धु हैं ।

—योगीराज अरविन्द

प्राकृतिक न्याय का सिद्धांत और अनुशासनिक मामलों में इसकी प्रयुक्ति

● एम० एन० हक
लेखा अधिकारी (प्रशासन)

इसके पहले कि हम इस बात पर विचार करें कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का अनुशासनिक मामलों में किस प्रकार प्रयोग होता है और इसे नजरअंदाज कर देने से पूरी की पूरी अनुशासनिक कार्यवाही किस प्रकार निष्फल हो जाती है, यह जानना अधिक उपयोगी होगा कि प्राकृतिक न्याय क्या है ?

प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का इतिहास बहुत प्राचीन है। सदियों के न्यायिक निर्वचन के पश्चात् निम्नलिखित दो मोटे सिद्धांत उभरे हैं जिन्हें अदालती और प्रशासनिक कार्यवाहियों में समान रूप से मान्यता प्राप्त है।

1. "Name judex in Causa Sua" : कोई भी व्यक्ति अपने मामले में न्यायाधीश नहीं हो सकता है।

2. "Audi alteram partem" : दूसरे पक्ष को सुना जाये।

उपयुक्त दोनों सिद्धांतों से एक तीसरे सिद्धांत ने जन्म लिया, "केवल न्याय ही नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि यह भी नजर आये कि न्याय स्पष्ट और संदेहमुक्त किया गया है"।

संविधान के बनाये जाने के पश्चात् प्राकृतिक न्याय का सिद्धांत अनुच्छेद 14 में दिये गये समानता के अधिकार का अंश बन चुका है। प्राकृतिक न्याय के उल्लंघन से मनमानेपन का जन्म होता है जो विभेद की नीति के समान है। जहाँ कहीं सरकार की नीति से विभेद उत्पन्न होता है वहाँ अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होता है। इसी तरह यदि सरकार की किसी नीति से प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन होता है तो अनुच्छेद 14 में दिये गये समानता के अधिकारों का भी उल्लंघन होता है। प्राकृतिक न्याय का सिद्धांत केवल राज्य की कार्यवाही या विधि निर्माण के मामले में ही लागू नहीं होता है बल्कि ट्रिब्युनल या कोई अन्य अधिकारी या लोगों का ऐसा समूह जो संविधान के अनुच्छेद 12 के तहत राज्य की परिभाषा में नहीं आते हैं और जिन्हें न्याय का कार्य प्राधिकृत किया गया है उनके मामले में भी लागू होता है। अन्यथा नारायण बनाम जनरल मैनेजर दक्षिण रेलवे, ए० आर० 1956 पैड 220 के मुकदमे में अदालत ने यह निर्णय दिया कि हालांकि विभागीय जांच की कार्यवाही यथार्थ रूप से अदालती कार्यवाही नहीं है फिर भी अदालतों ने यह बार-बार निर्णय दिया है कि प्राकृतिक न्याय का सिद्धांत विभागीय जांच में उसी शक्ति के साथ लागू होगा जिस तरह अदालती कार्यवाही में लागू होता है।

दूसरे पक्ष को सुने जाने का अर्थ यह है कि स्वच्छ वातावरण में दोनों ही पक्षों को अपनी-अपनी बातें कहने का सम्पूर्ण अवसर प्रदान किया जाये। इस प्रकार हर न्यायिक और अर्द्ध-न्यायिक संस्था का

यह कर्तव्य होता है कि प्रभावित पक्षों को इस बात का यथोचित अवसर प्रदान करे कि वह अपनी बातों को उनके समक्ष रख सके। किसी को भी बिना सुने हुए अभियुक्त न कहा जाय। इस सिद्धांत की मंशा यह है कि दूसरे पक्ष की अनुपस्थिति में कोई गवाह नहीं पेश किया जाये और यदि लिखित गवाही दी गयी है तो उसको एक प्रति दूसरे पक्ष को भी दी जाये ताकि वह अपने विरुद्ध लगाये गये अभियोगों का खण्डन कर सके।

कोई भी व्यक्ति अपने मामले में न्यायाधीश नहीं हो सकता है और केवल न्याय ही नहीं किया जाना चाहिए बल्कि न्याय स्पष्ट और संदेहमुक्त भी हो। इसका यह अर्थ है कि न्याय करते समय जांच प्राधिकारी को उस मामले में किसी प्रकार की निजी दिलचस्पी नहीं होनी चाहिए और उसे न्यायाधीश की उदासीनता को अपनाते हुए पक्षपातमुक्त न्याय करना चाहिए। एक पुलिस कर्मचारी के विरुद्ध विभागीय जांच के दौरान वही अधिकारी जो जांच की अध्यक्षता कर रहे थे वे स्वयं उस कर्मचारी के विरुद्ध गवाही देने के बाद फिर जांच की अध्यक्षता करने लगे। उस कर्मचारी ने अदालत में जब इस कार्यवाही को चुनौती दी तो अदालत ने उस कर्मचारी के पक्ष में निर्णय देते हुए यह कहा कि जांच अधिकारी ने अपने इस आचरण से प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का थोड़ा उल्लंघन किया है और उस अधिकारी का आचरण पक्षपातपूर्ण है।

जहाँ तक यथोचित अवसर का प्रश्न है इसकी मंशा यह है कि (1) जांच का संचालन प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतानुसार किया जाये (2) और जांच सुचारु और स्वच्छ रूप से की जाय। संविधान के अनुच्छेद 311 (2) और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के सम्बन्ध में माननीय न्यायमूर्ति बेंकटारमन आयर ने यह कहा कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के अनुसार एक पक्ष को इस बात का अवसर मिलना चाहिए कि वह उन तमाम आवश्यक गवाहों को जिन पर वह भरोसा रखता हो, पेश कर सके; विपक्ष की गवाही उसकी उपस्थिति में ली जाये और उसे इस बात का अवसर दिया जाये कि वह उन तमाम गवाहों के साथ जिरह कर सके और उसके विरुद्ध किसी भी सामग्री के प्रयोग करने की उस समय तक इजाजत नहीं दी जाये जबतक कि उसके सम्बन्ध में उसे स्पष्टीकरण देने का अवसर नहीं प्रदान किया जाता। जिन गवाहों ने उसके विरुद्ध गवाही दी उनके साथ जिरह करने का अधिकार एक बहुत ही महत्वपूर्ण अधिकार है और यदि यह नजर आता है कि जांच प्राधिकारी ने इस अधिकार के प्रयोग में किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न की है और जिन अभिलेखों को देखने के लिये वह सक्षम था उसे नहीं देखने दिया गया है तो इसका स्पष्ट अर्थ यही होगा कि जांच प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के अनुसार नहीं संचालित किया गया है। संविधान का अनुच्छेद 311 (2) सरकारी कर्मचारियों को इस बात का अवसर प्रदान करता है कि वह (1) अपने ऊपर लगाये गये अभियोगों से इन्कार कर सके और अपनी बेगुनाही साबित कर सके। ऐसा करना उसी समय सम्भव होगा जब उस पर लगाये गये अभियोगों के बारे में उसे बता दिया जाये (2) और गवाहों के साथ जिरह के द्वारा अपनी सुरक्षा करने का अवसर दिया जाये।

प्राकृतिक न्याय का सिद्धांत केवल उन मामलों में लागू नहीं होता है जहाँ दण्डात्मक आदेश दिया गया हो, बल्कि अन्य मामलों में भी वैसे ही लागू होता है।

एक विभागीय प्रोन्नति समिति (डी० पी० सी०) ने अपने 9-5-77 की कार्यवाही में एक चयन सूची बनाई। उस सूची में एक टेलिफोन ऑपरेटर का नाम भी सफलता के पश्चात् शामिल था। इसके आधार पर उस टेलिफोन ऑपरेटर को टेलीफोन सुपरवाइजर में पदोन्नति दी गयी। कुछ दिनों बाद डी० पी० सी० को उस चयन सूची में गलती का आभास हुआ और इस प्रकार उन्होंने उस सूची को संशोधित कर दिया और इसके पश्चात् आवेदनकर्ता का नाम सूची से विलोपित कर दिया गया और उन्हें टेलीफोन सुपरवाइजर से टेलीफोन ऑपरेटर बना दिया गया। ऐसा करते समय आवेदनकर्ता को न तो नोटिस दी गयी और न इस बात का अवसर दिया गया कि वह अपने मामले के बारे में कुछ कह सके। आवेदनकर्ता ने अदालत में मुकदमा कर दिया। विभाग की ओर से यह कहा गया कि पुराने पद पर प्रत्यावर्तन दण्ड के रूप के नहीं था बल्कि चयन सूची में गलती के सुधार के लिये किया गया था। और यदि उन्हें कुछ कहने का अवसर दिया भी जाता तो स्थिति में कोई अन्तर नहीं होता, क्योंकि अन्ततः इस गलती का सुधार करना था। अदालत ने यह कहा कि ऐसा कहना कि प्राकृतिक न्याय का सिद्धांत केवल दण्डात्मक आदेशों में ही लागू होता है और यदि उस व्यक्ति को अवसर दिया भी जाता तो स्थिति में कोई फर्क नहीं आता, पूर्णतः भ्रान्तिपूर्ण है। इस मामले में खुलम-खुल्ला प्राकृतिक न्याय का उल्लंघन हुआ है, क्योंकि सरकारी कर्मचारी को बिना कुछ कहने का अवसर दिये हुए एकतरफा निर्णय लेना गलत था और इससे प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन हुआ था। अतः प्राकृतिक न्याय सभी न्याय प्रक्रियाओं में विशिष्ट स्थान रखता है।



हमें यह ध्यान अवश्य रखना है कि राजभाषा अधिनियम की धारा 3 (3) तथा राजभाषा नियम 5 का कार्यालय में पूर्णरूपेण कार्यान्वयन हो ।

—हिन्दी कक्ष

अपनी भाषा में काम करना इतना ही सहज है जितना की मछली के लिए समुद्र में तैरना ।

देखी भाषाओं में हिन्दी ही एक ऐसी भाषा है, जो बहुत जल्दी सीखी जा सकती है और जिसका नियमित रूप से पढ़ना बहुत ही सहज है।

— डा० मुंजे

हास्य

पुरुषोत्तम कुमार राजगृहार
लेखाधिकारी

एक युवती अपने अधिवक्ता पति से कहती है—वकालत करने में दो बातें ध्यान में रखनी चाहिए। एक तो जितना हो सके आत्मीय मित्र कम बनाओ वरना रोज कोई-न-कोई मित्र अपना मामला मुफ्त में पैरवी करने आएगा। अगर जीत गया तो तुम्हें श्रेय न देकर अपने मामले की अच्छाई को सराहेगा और हार गया तो तुम्हारी नादानी पर पचास बेतकश्लुफ गालियां देगा। दूसरी बात ध्यान रखना कि किसी मुवक्किल का कागज छूने से पहले पेशगी ले लो, वरना वह मुकदमें के बाद या तो कुछ न देगा या बीच में ही दूसरा वकील कर लेगा। पत्नी की सलाह पर युवक अधिवक्ता कोशिश करता है कि यार-दोस्ती कम करे, पर कहाँ तक सिमटा जाए। एक दिन एक पैसा भी नहीं मिला। दो दोस्तों के मुकदमें में फँसा रहा—यहाँ तक कि पान-पत्ते का खर्च भी मरा। घर लौटते समय कुछ साग-सब्जी भी नहीं ले पाया। खाली हाथ घर आया। बीबी पुरानी दकियानुसी नहीं थी। साज-शृंगार कर बैठी थी। घर में घुसते ही पूछा—सब्जी लाए, आज को क्या आमदनी रही। युवक अधिवक्ता ने उत्तर दिया—आज आमदनी ही नहीं हुई। तब बिना सब्जी के रोटी खाना। दिनभर भाड़ झोंका और पैसा नदारत। भगवान न करे कि किसी की किसी वकील से शादी हो।

✱ ✱ ✱ ✱ ✱ ✱ ✱ ✱

एक वकील साहब रोज सबेरे गंगा स्नान कर एक मंदिर होते घर लौटते थे। मंदिर में भगवान से उनकी एक ही प्रार्थना रोज होती थी—हे भगवान ! आँख का अंधा गाँठ का पूरा एक भेजे। एक सज्जन जी उस समय मंदिर में रहते थे, उनसे उनकी मुलाकात होती रहती थी। एक दिन पूछ बैठे—यह कौन-सी आराधना है और किस महात्मा का बताया यह मंत्र है। वकील साहब बहुत घमंड के साथ बोले—यह मंत्र उनकी पत्नी ने उन्हें बताया था। मंत्र का क्या मतलब है। वकील साहब बोले गाँठ का पूरा मतलब पैसा वाला हो और आँख का अन्धा मतलब पैसा देने में कंजूस ना हो। उस सज्जन ने कहा कि मैं भी एक वकील हूँ और मैं आपकी पत्नी से मंत्र की दीक्षा लूँगा।



“स्वर्ग दो पल का”

श्री गुप्ता प्रसाद “मधुकर”

बरीय लेखाकार

अनुपम बहुत बड़ा आदमी था। वह अपने को बड़ा आदमी समझता ही नहीं, बल्कि बड़ा आदमी था भी। गंगा के तट पर गंगा की लहरों से किलोल करता एक बड़ा सा बंगला था उसके पास। बंगला के आगे अमराइयों की झुरमुट में कूकती कोयलें बसन्त ऋतु में सदा मधुरस ही घोलती रहती थीं। चाँद-सी गोरी, फूल-सी कोमल एवं लचीली उसकी पत्नी मधुर मुस्कान के साथ उसका स्वागत सदा दरवाजे पर किया करती थी जिसकी मधुर आवाज अमराइयों की ओट में कूकनेवाली कोयलों को भी लजाया करती थी।

अनुपम भी कोई कम सुन्दर नहीं था। दरअसल वह अनुपम आलोक था। उसकी पानीदार चेहरे पर मुग्ध होनेवाली कृष्ण की गोपियाँ भी कम नहीं थी। लेकिन सबसे बड़ी बात थी कि वह दिल का सोदागर था, वह दिल देता था, दिल लेता था। ऐसे ही खानाबदोशों की जिन्दगी जिने वालों की बस्ती, जो वीरचन्द पटेल पथ पर बसी हुई थी, से होकर अनुपम गुजर रहा था। यह सोचते हुए कि जेठ की दुपहरिया, सावन भादों की वर्षा तथा हड़डी को छेद देनेवाली माघ-पूस की सर्दी को बर्दास्त कर इन झोपड़ियों में अपनी जिन्दगी ये कैसे जीते हैं? गजब की सहनशक्ति है। पता नहीं, इनके दर्द से व्यथा का प्याला कब छलक जाये। आखिर ऐसी विषमता क्यों? एक तरफ अमीरी का आलम ऐसा कि जहाँ हजारों रुपये ऐशोआराम एवं शराब में फूँक दिये जाते हैं और दूसरी ओर बीमार बच्चे की दवा खरीदने के लिये उसकी माँ के पास एक पैसे नहीं। अनुपम यह सोचते जा रहा था कि पीछे से मैले-कुचैले, वस्त्रों में लिपटी एक षोड़सी, जिसकी झील सी बड़ी-बड़ी आखों में उभरी व्यथा की लकीरों को समझते देर नहीं लगी, ने आवाज दी “बाबू ओ बाबू, ओ जानेवाले बाबू एक रुपया दे दे। भगवान तेरा भला करेगा। कल से भूखी हूँ। अनुपम ने पलट कर देखा—जैसे खूदा ने हीरा को तराश कर सूखी हुई घास में लपेट कर रख दिया हो। पूछा—क्या नाम है तुम्हारा? सोना। क्यों भीख माँगती हो? कोई उत्तर नहीं दिया सोना ने। अनुपम ने कहा—सोना बहुत सुन्दर नाम है तुम्हारा, फिर भीख क्यों माँगती हो, सोना। सोनागाछी में क्यों नहीं बैठ जाती? बैठने से क्या होगा बाबू?

सोना बरसेगें सोना। वह खिलखिला पड़ी जैसे सोना इस दुनियाँ से दूर की चीज हो उसके लिये।

अनुपम ने इशारा किया। वह पीछे-पीछे चल दी। डेरा पर आकर उसने आलमारी से एक धुली हुई धोती निकाली और लवस की टिकिया एवं तौलिया देते हुए कहा—सोना पहले बाथरूम में जाकर स्नान कर ले। सोना बाथरूम में चली गयी। स्नान करने के बाद उसे तेल एवं कंधी देते हुए अनुपम ने

नौकर को होटल से एक प्लेट चावल लाने का आदेश दिया। बाल-सवारने के बाद सोना स्वर्ग की परी से कम सुन्दर नहीं दीख रही थी। मालूम पड़ता था चाँद धरती पर उतर आया है। उसे क्या पता कि ईंधन बने हुए जहन्नुम के इन गरीबों के बीच जन्नत का लुटेरा अनजाने ही पहुँच गया।

नौकर ने खाने का प्लेट उसके आगे रख दिया। वह उस पर ऐंसे टूट पड़ी जैसे मालूम पड़ता था कि वह बहुत दिनों की भूखी हो। भूख मिटाने के बाद सोना लाख-लाख दुआएँ देती हुई चलने को तैयार हुई तो अनुपम ने हाथ पकड़ लिया यह धुली धोती ये लकड़ की टिकिया, यह भोजन क्या मुफ्त! सोना अपना हाथ छुड़ाते हुए दरवाजे से भागना चाही, लेकिन दरवाजे से लगकर उसका सिर फट गया। वह लहू-लुहान हो गयी और आह भरते हुए कही—बाबू! दो पल का स्वर्ग मैंने भी देख लिया। यह कहते हुए उसके प्राण पखेरू उड़ गये। अनुपम ने बाँसघाट के श्मशान रजिस्टर में लिखाया कि उसकी पत्नी की मृत्यु दरवाजे से ठोकर लगने से हो गयी।



कड़वी सचचाई

सुधी सुमन तिग्गा

हवा में किसने जहर धोल दिया है,
कि अब साँस लेना मुश्किल,
तो जीना हादसा है।

हँसते हैं सभी इसलिए कि दुःख-दर्द,
जो दुनिया में मिला है, बढ़े नहीं।

अजीब शहर है, यहाँ तो
सभी के शरीर लहुलुहान हो रहे हैं,
क्योंकि पूर्वज अपनी जमीनों में
काँटे और पत्थर बो गए हैं।

हर मानव को अपना सलीब,
अपने काँधे पर उठाकर चलना है।

इन्हीं सब उलझनों में 'खोया,
कोई दुःख की चादर ओढ़े,
बर्फ़ीली सदियों में सर झुकाए,

चलता रहा वहाँ तक
जहाँ जमीन से आसमान मिलता है

देश-भक्ति

जाकिर हुसैन
लिपिक

किसी कवि ने ठीक ही लिखा है कि जिस हृदय में अपने देश के प्रति प्यार नहीं है, वह दिल नहीं, पत्थर है।

प्रत्येक देशवासी को अपने देश पर गर्व और स्वाभिमान होना चाहिए। जिस आदमी में अपने देश के प्रति स्वाभिमान नहीं होता, वह आदमी नहीं, जानवर होता है—

“ जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं, नर-पशु निरा है और मृतक समान है ॥”

अपने देश के प्रति त्याग और श्रद्धा की भावना ही देशभक्ति कहलाती है। देशभक्त अपने लिए नहीं सोचता। वह सदैव देश के विकास के सम्बन्ध में सोचता रहता है। उसकी यही चिन्ता रहती है कि देश सर्वदा स्वतन्त्र और अखण्ड रहे। देश पर किसी तरह का खतरा आता है तो वह अपनी जान तक देने को तैयार रहता है। अपनी मातृभूमि के लिए समर्पित होने में जो सुख मिलता है, वह दूसरी जगह कहाँ। मातृभूमि हमें बड़े प्यार से पालती-पोसती है। अतः हमारा कर्तव्य है कि हम अपनी मातृभूमि के विकास के लिए सोचें। प्रसिद्ध अंग्रेज कवि स्कॉट का ठीक ही कहना है कि देशभक्ति के अभाव में बड़े-से-बड़े ज्ञानवान, धनवान और बुद्धिमान भी समाज में आदर के पात्र नहीं होते।

दुनिया के इतिहास में अनेक देशभक्तों के नाम मिलते हैं, जिन्होंने अपने देश के लिए हँसते-हँसते अपने प्राण न्योछावर किए। भारत का इतिहास देशभक्तों के अमर यश से भरा पड़ा है। महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, छत्रसाल, झाँसी की रानी, वीर कुँवर सिंह, वीर सावरकर, सुभाष चन्द्र बोस, महात्मा गाँधी, सरदार भगत सिंह, चन्द्रशेखर 'आजाद', खुदीराम बोस आदि अनेक देशभक्तों के कारण हमारा सिर ऊँचा है।

देशभक्ति में त्याग और बलिदान की भावना होती है। वे सभी नागरिक देशभक्त हैं, जो अपने देश की भलाई के लिए अपने स्वार्थ को त्याग देते हैं। प्रत्येक नागरिक अपने कर्तव्यपालन से सच्चा देशभक्त हो जाता है। किसान, मजदूर, व्यापारी, कर्मचारी, अध्यापक, डॉक्टर, इंजीनियर, सैनिक, नेता, अभिनेता तथा समाज-सुधारक अपने देश की भलाई के लिए बहुत कुछ कर सकते हैं। ये अपने स्वार्थ से उठकर महान देशभक्त हो सकते हैं। विवेकानन्द, दयानन्द सरस्वती, राजाराम मोहन राय, रवीन्द्र नाथ ठाकुर, जगदीश चन्द्र बोस महान देशभक्त थे।



आदि कवि - एक परिचय

जे० पी० कर्ण
लेखा अधिकारी (से० नि०)

सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में महर्षि बाल्मीकि आदि कवि के रूप में प्रतिष्ठित हैं। घोर तप एवं अखण्ड साधना में लीन इस महर्षि के शरीर पर बल्मीक (दीमक) आच्छादित हो गये थे शायद इस कारण ही ये बाल्मीकि के नाम से जाने गये। वैसे इनके मूल नामकरण का उल्लेख प्राचीन साहित्य में अप्राप्त है। इनके जन्म को लेकर अनेक किंवदन्तियाँ हैं। इस सम्बन्ध में किन्तु आम सहमति यह है कि ये प्रचेता ऋषि के आत्मज थे। बाल्यकाल में कुसंगति के कारण असामाजिक कृत्यों में संलग्न रहा करते थे। दैवयोग से साधु संगति प्राप्त हुई और यहीं से अध्यात्म तथा तप-साधना का आरम्भ इनके जीवन में हुआ। स्वयं ऋषि ने भी अपनी कथा कही है जो 'रामचरितमानस' में इस प्रकार वर्णित है :—

बाल्मीकि नारद पदयोनी ।

निज-निज मुखन कही निज होनी ।

(रामचरितमानस 1.2)

तपश्चर्या के समय में ही एक गुरुकुल की स्थापना भी इन्होंने की। ऋषि भारद्वाज भी इनके गुरुकुल के विद्यार्थी रहे थे।

'तमसा' नदी में शिष्य-मण्डली के साथ स्नान करते समय ऋषि का मन एक स्थान पर कुश इत्यादि एकत्र करते हुए रम गया। इस प्रकरण में उन्हें एक व्याध द्वारा नर क्रींच पक्षी के वध के कारण व्यथित मादा क्रींच का अति विलाप सुनने का तथा बाण से बेधे गये पक्षी को देखने का अवसर मिला। कवि हृदय व्यथित हो उठा तथा अनायास उनके मुख से छन्दोबद्ध कवित फूट पड़ी।

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वती समाः ।

यत् क्रींच मिथुनादेवमवधो काम मोहितम् ॥

(1 : 2 : 15)

साहित्यकारों का विचार है कि यही मानव द्वारा निर्मित प्रथम कविता है। यह श्लोक अनुष्ठम् छन्द में है। इस छन्द के अनेक भेद हैं। परन्तु जिसका सबसे अधिक प्रयोग होता है उसके प्रत्येक चरण में आठ वर्ण होते हैं। मात्रायें सबकी भिन्न-भिन्न होती हैं। प्रत्येक चरण का पाचवाँ वर्ण लघु, छठा तथा सातवाँ वर्ण दीर्घ (प्रथम तथा तृतीय चरण का) एवं द्वितीय तथा चतुर्थ चरण का कृस्व होता है। कविता भावों के मन्थन के पश्चात् प्रकट होती है, किन्तु इसका दूसरा स्रोत सद्यः प्रस्तुती है। आदि कवि की कविता इस सद्यः प्रस्फुटन की श्रेणी की है। इसी को लक्ष्य कर कविवर सुमित्रानन्दन पन्त ने कहा है :—

विद्योगी होगा पहला कवि,
आह से उपजा होगा गान।
उमड़ कर आँखों से चुपचाप,
बही होगी कविता अनजान।

इसके बाद कुछ दिनों के ऊहापोह से उबरने के क्रम में इन्हें दैवी कृपा प्राप्त हुई और अनुष्ठम् छन्दों में रामकथा का वणन करने का आदेश प्राप्त हुआ। ऋषि ने दैव-आदेश का सहर्ष पालन किया।

बाल्मीकि के काव्य ग्रन्थ का नाम 'रामायण' है। इस महान् काव्य में रामकथा वर्णित है। प्रारम्भ श्री नारद तथा बाल्मीकि के सम्भाषण से होता है। बाल्मीकि ने मानव-चरित्र की परिकल्पना की है, उन्हें एक आदर्श मनुष्य की तलाश थी, सही जानकारी हासिल होते ही उसे उन्होंने अपने कवित्व के बल से विश्वमानव बना दिया। उनका कवि हृदय सवंगुण सम्पन्न एक असाधारण व्यक्ति की खोज में था। इसका समाधान महर्षि नारद ने इक्ष्वाकु वंश के राम नाम के राजा को इंगित कर किया। बाल्मीकि ने राम का वणन करते हुए लिखा है कि श्रीराम के नेत्र कुछ कुछ लाल हैं। वे अजानुबाहु हैं, वक्ष विशाल तथा ग्रीवा शंख सदृश है। वे धर्म के ज्ञाता, दृढ़ प्रतिज्ञ, प्रजाहित साधक, यशस्वी, ज्ञानी, पवित्र, जितेन्द्रिय तथा परम दयालु हैं। वह सभी शास्त्रों के ममज्ञ तथा धनुर्वेद के निष्णात विद्वान हैं। वह समुद्र की तरह गम्भीर, हिमालय की तरह धैर्यवान्, विष्णु की तरह पराक्रमी, पृथ्वी के समान क्षमाशील, कुबेर के समान त्यागी, धर्मराज के समान सत्यव्रती हैं तथा चन्द्रमा सदृश मनोहर हैं। फिर भी, बाल्मीकि के राम मूलतः नर चरित्र ही हैं नारायण नहीं, किन्तु कवि ने अपने काव्य में नरचरित्र को इतने उदात्त गुणों से संवा त कर दिया कि वह नारायण बन गया।

महर्षि वशिष्ठ के आश्रम में शिक्षा प्राप्त कर श्रीराम महर्षि विश्वामित्र से तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा सैनिक समस्याओं को समझने तथा उससे निपटने की शिक्षा ली थी। इस शिक्षा का मूल उद्देश्य था प्रजारंजन तथा समदर्शी रूप और यही श्रीराम के जीवन का परम लक्ष्य रहा।

पिता द्वारा वन जाने की आज्ञा को श्रीराम सहर्ष स्वीकार करते हैं तथा पिता की आज्ञा ही हर स्थिति में माननीय बताते हैं। वन मार्ग में वे सर्व प्रथम निषादराज से मिले। फिर तो वनवास की सारी अवधि में उन्होंने बानर भालू, शम्भर आदि वनवासियों को अपने साथ मिलाया, उनसे मित्रता की तथा उनकी सहायता से रावण के राज्य का नाश किया।

इस काव्य में वर्णन के अनुसार राम-रावण का युद्ध वास्तव में दो पद्धतियों का टकराव था। अधिनायकवादो था। उसने अपनी प्रजा को यथायोग्य गृह तथा सुख-सम्पदा की उपलब्धि करायी। इस प्रकार वह विश्व का पहला साम्यवादी था। लेकिन उसके राज्य में प्रजा का कोई अधिकार नहीं था। राज्य का पूरा शासन उसके ही इच्छानुसार होता था। इसके विपरीत राम का राज्य प्रजाहित के लिए था। वे अपने मन्त्रियों, राजगुरुओं तथा मनीषियों की सम्मति से शासन करते थे तथा धर्म और मर्यादा के अनुपालन में सदा रत रहते थे। राम जनवादी थे तथा मर्यादा पालन को सर्वोपरि मानते थे। उदाहरणार्थ, बाल्मीकि कवि रामायण के अनुसार राम के चरणों का संस्पर्श पाकर पाषाणी अहत्या नारी नहीं बन जाती

है। गौतम द्वारा शांति होने के बाद अहल्या एक निर्जन कुटी में सोक दृष्टि से ओझल होकर रहा करती थी। मुनी विश्वामित्र की प्रेरणा से राम और लक्ष्मण ने उसकी कुटी में पधार कर उसे लोकमान्यता प्रदान की। यहाँ राम अहल्या को अपने चरण से नहीं छूते, उलटे दोनों भाई आदर सहित उसका चरण स्पर्श करते हैं—“राघवी तु तदा तस्या पादौ जगृहुर्मुदा”।

एक अवसर पर देवताओं को अपना परिचय देते हुए श्रीराम स्वयं कहते हैं —“आत्मानं” मानुष मन्ये रामं दशरथात्मजम्”। अर्थात् मैं तो अपने को दशरथ का पुत्र राम मानता हूँ। वाल्मीकि के राम में मानव-सुभ कुछ दुर्बलताएँ भी हैं। सीता-हरण या लक्ष्मण को शक्ति-बाण लगने के अवसर पर राम अत्यन्त दुःखी तथा कातर दिखाई पड़ते हैं। युद्धभूमि में रक्तरंजित मरणासन्न लक्ष्मण को देखकर राम का कथन कितना मार्मिक है।

देशे देशे कलत्राणि देशे-देशे च बान्धवाः ।

तंतु देशे न पश्यामि यत्र भ्राता सहोदरः ॥



भारत - वन्दना

● कुंज बिहारी प्रसाद

तेरे चरणों पर हे भारत माँ !

मैं धरूँ कौन सा नूतन फूल ;

तेरे पद-पूजा में ऋषिवर

कोई फूल सके ना भूल ।

तू माटी सकती नहीं बोल

तब भी कण-कण प्राण,

जो आये बन कर वाचाल

देना स्वर, कर दें यशगान ।

यह तन है तेरी माटी का

हो तेरे हित में उपयोग,

जब तक होता नहीं ऐसा

करता हूँ मैं इसका भोग ।



चन्द्रमा में कालिमा क्यों ?

● सी० एस० पी० वर्मा

चन्द्रमा में कालिमा का वैज्ञानिक कारण है—चन्द्रमा के धरातल में खाइयों की छाया का दीख पड़ना। फिर भी चन्द्रमा अपनी स्वच्छ, निर्मल, धवल किरणों से हमारा मन सर्वैव मोहित करता रहा है। साहित्य के क्षेत्र में यह सुकुमारता, सौन्दर्य और लावण्यता का प्रतिमान माना जाता है। अध्यात्म के क्षेत्र में भी इसकी महत्ता रही है। यहाँ चन्द्रमा में कालिमा के आध्यात्मिक कारणों की चर्चा की जा रही है।

दृश्य गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित “रामचरितमानस के लंकाकाण्ड” का है। सीता की खोज में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम लंका की ओर बढ़ते चले जा रहे हैं। समुद्र-तट पर आकर वे रुक जाते हैं। यहाँ श्रीराम अपनी विशाल सेना के साथ सुनेल पर्वत पर आकर विराजमान होते हैं। चतुर्दिक रमणीक प्राकृतिक छटा बिखरी पड़ी है। लक्ष्मणजी की दृष्टि पर्वत की एक स्वच्छ धवल, उज्ज्वल समतल शिखर पर पड़ी। उन्होंने उस समतल शिखर को अपने हाथों से वृक्षों के सुकोमल किसलय और कुसुमों से सजाकर उसपर मसृण मृगछाला बिछा दी। उसी आसन पर कृपालु श्रीराम विराजमान होते हैं। वे बानर-राज सुग्रीव के अंक में अपना सिर रखे हुए हैं। उनकी बायीं ओर धनुष तथा दायीं ओर तरकस रखा हुआ है। वे अपने दोनों कर कमलों से वाण सुधार रहे हैं। भक्तराज विभीषण भगवान श्रीराम के कानों से लेकर सलाह-मशविरा कर रहे हैं। सौभाग्यशाली हनुमान तथा अंगद श्रीराम के कोमल चरण दबा रहे हैं। लक्ष्मणजी कमर में तरकस कसे तथा हाथ में धनुष-बाण लिए प्रभु के पीछे शोभायमान हो रहे हैं। भगवान श्रीराम के मुखारविन्द का सौष्ठव प्राकृतिक सौन्दर्य में चार-चांद लगा रहा है। जब भगवान ने पूर्व दिशा की ओर दृष्टिपात किया तो पाया कि चन्द्रमा नीले आकाश में अपनी स्वच्छ रजत किरणें बिखेर रहा है। तब उन्होंने सबसे कहा कि देखो तो सही, चन्द्रमा सिंह के समान किस प्रकार अपने प्रताप से अंधकार रूपी मतवाले हाथी के मस्तक विदीर्ण करते हुए आकाश रूपी वन में विभंज विचर रहा है। यहाँ पर सन्त शिरोमणि तुलसीदास ने रात्रि की शुक्लाभिसारिका स्वरूप मान रखा है तथा कहा कि पूर्व दिशा में पूर्ण चन्द्रोदय होने पर अंधकार का विनाश हो गया तथा जिस प्रकार सुन्दरी का सौन्दर्य बढ़ाने के लिए हीरे-मोती के आभूषण आवश्यक होते हैं, उसी प्रकार रात्रि-रमणी के शृंगार स्वरूप हीरे-मोती के गहने के रूप में तरह-तरह के तारे-समुदाय आकाश में बिखरे हुए हैं, जो अत्यन्त मननाभिराम लग रहे हैं। चन्द्रमा के इस चित्ताकर्षक, मनमोहक रूप को देखकर भगवान श्रीराम पूछते हैं, भाइयों! तुमलोग अपनी अपनी मति-बुद्धि से यह बताओ कि चन्द्रमा में कालिमा क्यों है तथा यह कालिमा क्या है? इस प्रश्न पर सब लोग सोचने-विचारने लगते हैं। थोड़ी देर बाद सुग्रीवजी कहते हैं कि दे

रघुनाथजी ! चन्द्रमा में पृथ्वी की छाया दीख पड़ती है, वही कालिमा प्रतीत हो रही है। कुछ लोगों ने यह कहा कि ज्योतिष शास्त्रानुसार चन्द्रमा राहु से ग्रसित होने के कारण कालिमा लिए हुए हैं। किसी ने कहा कि जब ब्रह्मा ने कामदेव की स्त्री रति का मुख बनाया तब उन्होंने चन्द्रमा की समस्त सुन्दरता निकाल कर रति के मुखमंडल की श्री-वृद्धि की, जिसके कारण रति का मुख तो अतीव सुन्दर हो गया, परन्तु चन्द्रमा के हृदय में छिद्र हो गया। इसी छिद्र के दिखाई पड़ने के कारण चन्द्रमा का मध्य भाग काला प्रतीत होता है।

अभी तक श्रीराम प्रेम से ध्यानपूर्वक सबों की बातें सुन रहे थे। अब वे अमृत वचन बोले : “जब समुद्र-मंथन हुआ था तो चौदह रत्न निकले थे। उनमें अमृत और विष भी था। अमृत-रूप-चन्द्रमा का विष सहोदर भ्राता है, अतः विष उसे अत्यन्त प्यारा है। चन्द्रमा ने अपने सहोदर भ्राता विष को अपने हृदय में प्रेम के कारण धारण कर लिया है। चन्द्रमा अपनी अमृतरूपी किरण के साथ विष रूपी ज्वाला को फैलाकर विरहाग्नि में तड़पते नर-नारी की व्यथा को और फैलाता है जिसके कारण विरह-विदग्ध नर-नारी का हृदय और भी अधिक दग्ध होता है।

श्रीराम के इस वचन को सुनकर कुछ लोग कहते हैं कि प्रभु सीताजी के हरण के पश्चात् विरह-वेदना से स्वयं ही पीड़ित थे, इसी कारण उन्होंने ऐसा कहा होगा। यह भीमांसा भी बहुत हद तक समीचीन प्रतीत होती है।

भक्त राज श्री हनुमानजी अभी तक “सियाराम मय सब जग जानी” के सिद्धांत में अटूट आस्था रखते हुए मौन-व्रत धारण किये बैठे थे। उन्हें सब कुछ राम नाम ही दिखायी पड़ रहा था। उन्होंने कहा, हे प्रभो ! चन्द्रमा आपका परम प्रिय दास है। वह आपकी सांवली सूरत, मोहिनी मूरत को अपने हृदय में धारण किये हुए है। आपकी इसी श्याम मूर्ति की झलक चन्द्रमा में दृष्टिगोचर हो रही है। महाकवि तुलसी के शब्दों में :—

“कह हनुमन्त सुनहु प्रभु, ससि तुम्हार प्रिय दास ।

तव मूरति विधु उर बसति, सोई श्यामता अभास ॥”

(लंका कांड, दोहा १२)

यह सुनकर श्रीराम मुस्कुरा देते हैं। वे लोग धन्य हैं जो श्रीराम के इस मुस्कान-सौन्दर्य का आभास पाकर जीवन जी रहे हैं। एक बार प्रेम से बोलिये—सियापति रामन्द की जय ! मर्यादा पुरुषोत्तम राम की जय !

जीवन में सदा मुस्कुराना सीखिये

● नवल किशोर प्रसाद

मनुष्य के मानसिक दशा का उसके स्वास्थ्य से अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। कई विद्वानों का मत है कि रोग शरीर के अन्दर नहीं होते, बल्कि मस्तिष्क में उत्पन्न होते हैं। कुछ भी हो हमें उत्तम स्वास्थ्य के लिए अपनी मानस-कृतियों को मजबूत रखना ही चाहिए। किसी विद्वान ने ठीक ही कहा है कि मनुष्य अपने मानस का प्रतिबिम्ब है।

मानसिक दृष्टिकोण से सर्वप्रथम 'प्रसन्नचित्त' रहना ही अत्यावश्यक है। खुशमिजाज व्यक्ति, उन लोगों की अपेक्षा अक्सर अधिक स्वस्थ रहते हैं, जो उदासीन बने रहते हैं। पर ऐसे लोग भी अगर मुस्कुराना भी सीख जायें तो उनके स्वास्थ्य एवं स्वभाव में चार चांद लग जायें। उनमें आमूल परिवर्तन नजर आयेगा। कोई अगर आपके स्वास्थ्य के सम्बन्ध में पूछता है कि कहिए, आपका स्वास्थ्य कैसा है? अगर आप थोड़े भी अच्छे हैं तो भी दृढ़ निश्चय के साथ कहें कि, बहुत अच्छा "तो आपके ऊपर इसका जादू के माफिक असर होगा, और सम्भवतः आप अपने आपको काफी स्वस्थ महसूस करेंगे। परन्तु, यदि आप स्वस्थ रहने पर भी गिरी हुई जवान में जबाब दें कि किसी तरह जीवन व्यतीत कर रहा हूँ और कहीं इस भाँति आपको शाम तक सात-आठ बार उसकी पुनरावृत्ति करना पड़े तो निश्चय ही आपका स्वास्थ्य गिरा नजर आयेगा।

मुस्कुराना स्वास्थ्य के लिये तो जरूरी है ही हमें इसकी जरूरत अपने दैनिक कार्य में भी कम नहीं पड़ती। आपके कर्तव्य की कठोरता आपको अधीर बना सकती है, पर इसका मुकाबला आप मुस्कुरा कर करेंगे, तो उसका पालन करना आपको सरल प्रतीत होगा।

क्रोध, आशंका, चिंता, डर आदि मानसिक रोग हैं। जिस प्रकार शारीरिक रोगों का हमारे चेहरे पर प्रभाव पड़ता है उसी तरह चिंता, क्रोध आदि का भी प्रतिबिम्ब हमारे मुख पर पड़ता है। इस सब रोगों की अकेली दवा है - प्रसन्नचित्त रहना, मुस्कुराना। मुस्कुराना वह दवा है, जो इन रोगों के निशान आपके चेहरे से ही नहीं उड़ा देगी, बल्कि इन रोगों की जड़ भी आपके दिल से निकाल देगी। यह हो ही नहीं सकता कि मुस्कुराने वाले का दिल काला या भारी रहे।

व्यक्त करने की क्षमता शब्दों से अधिक हमारे कार्यों में होती है। अपने प्रिय मित्र के मिलने पर हम कब नमस्कार करते हैं? मुस्कुराकर देते हैं। और, जो प्यार एक मुस्कान द्वारा व्यक्त होता है, वह हजारों नमस्कारों द्वारा व्यक्त नहीं हो पाता।

मुस्कुराना किसी आभूषण से कम नहीं है। प्रसन्नचित्त व्यक्ति के मित्र, उस व्यक्ति से, जो दार्शनिक-सा चेहरा बनाये रहता है, अधिक होते हैं। मुस्कुराने में शायद एक क्षण लगता है, पर उसकी याद किसी को जीवन भर रह सकती है। मुस्कुराने में आपका कुछ व्यय नहीं होता, पर जिसे वह मिलती है, उसकी खुशी बढ़ जाती है।

यदि आपको मुस्कुराना न आता हो तो उसे सीखिए। मुस्कुराने की आदत डालिये। एकांत में जाकर सीटी बजाइये और प्रसन्नता व्यक्त करने वाले कार्य कीजिए। आप धीरे-धीरे स्वयं खुश रहने लगेंगे।

प्रातः काल उठते ही आप अपने माता पिता और भाई-बहन को देखकर प्रसन्नता प्रकट कीजिए। बच्चों को देखकर खुश होना न भूलें। दैनिक कार्य में जहां भी जिससे मिलिए मुस्कुराते हुये मिलिये। इसका प्रतिफल यह होगा कि बदले में सभी आपको मुस्कुराहट भेंट करेंगे। आपको शीघ्र ही अनुभव होने लगेगा कि आपकी दुनिया बदल गयी है। उसमें आनन्द भरा है और प्रसन्नता आपको घेरे खड़ी है।

तो आइये, आज से हम जीवन में हर क्षण मुस्कुराते रहने का संकल्प लें।

शिकवा

● बाल गंगाधर कांत

शिकवा।

किससे ?

खुद से !

वक्त से !

जमाने से !

परिस्थितियों से !

या फिर,

तुमसे ?

नहीं। शिकवा तो एक से है,

बस !

....

अपनी तकदीर से।

इन्सान को इन्सान बनाने के लिए

● जगन्नाथ प्रसाद मेहता

आओ मिलजुल के तोड़ें दूरियों की दीवारें,
इस अँधेरे को बहुत दूर भगाने के लिए।
आओ अब हम कदम मिलाके साथ-साथ चलें,
दिलों में प्यार का फिर दीप जलाने के लिए।

आओ हम प्यार से सींचेंगे आज अपना चमन,
जो फूल सूख रहे उनको खिलाने के लिए।
वे तो खुदगर्ज थे जो दिल हमारा बाँट गये,
चलो बिछड़े दिलों को फिर से मिलाने के लिए।

अपनी आँखों के आँसुओं को शोला बनने दो,
चिता हैवानियत की आज जलाने के लिए।
तुम अपने हक के लुटेरों को खबरदार करो,
मिलके हम आ रहे हक सबका दिलाने के लिए।

हमारे चैन से बेचैन पड़ोसी अपना,
उठ रहे उसके कदम आग लगाने के लिए।
घर के झगड़ों पे खाक डाल साथ-साथ चलो,
उसके मन्सूबों को मिट्टी में मिलाने के लिए।

चाहे हिन्दू हों, मुसलमाँ हों, सिख, इसाई हों,
आओ, सब इन्कलाब एक नया लाने के लिए।
सरहदों पर वतन के दुश्मनों ने ललकारा,
बढ़ो वतन की आबरू को बचाने के लिए।

घरमें भी घुसके जो बैठे हैं वतन के दुश्मन,
हम हैं तैयार उन्हें सबक सिखाने के लिए।
वतन के वास्ते सर अपना है हथेली पर,
सर पे बाँधा है कफन सर भी कटाने के लिए।

वक्त का है ये तकाजा कि साथ-साथ चलें,
रौशनी की नयी मशाल जलाने के लिए ।
रात तो चन्द ही लम्हों की रह गयी मेहमाँ,
बढ़ो अब एक सवेरा नया लाने के लिए ।

अब सभी बन्द खिड़कियों को खोल देना है,
बह रही जो नयी हवा उसे आने के लिए ।
देखो करवट बदल रहा है ये जमाना भी,
जमीन से अब आसमाँ को मिलाने के लिए ।

आज इन्सानियत भी भरके लायी झोली में,
अमन की राह में कुछ फूल बिछाने के लिए ।
चलो हम सब भी आज बढ़के इसमें हो शामिल,
फिर से इन्सान को इन्सान बनाने के लिए ।



हुस्न की तारीफ

● बंशीधर मिश्र
लेखाकार

उस हुस्न की क्या तारीफ करूँ
जो हुस्न स्वयं ही तारीफ हो ।
आँखों में झील-सी गहरायी,
होठों पे गुलाबी लाली हो ।

ऐ हुस्न, तुम्हारा क्या कहना,
जिसमें हो शर्मो का गहना ।
नारी-शृंगार तो लज्जा है,
अंग-अंग जिसको तुमने पहना ।



नव-दो-ग्यारह

● लाला दीनबन्धु प्र० सिन्हा

लेखा अधिकारी

सुबह के समय रेलगाड़ी के उस डिब्बे में काफी भीड़ थी। दफतर जानेवाले बाबू, सब्जी बेचने वाले रोजी-रोटी की खोज में मजदूर, शहर में आकर सिनेमा देखने के शौकीन मियाजी एवं विद्यार्थी वर्ग—सभी उस डिब्बे में भरे थे। इतने में उस डिब्बे में खड़े कुरता-पाजामा पहने हुए एक दुबला-पतला नौजवान ने अपनी बातों से सभी का ध्यान आकृष्ट किया। नौजवान बोला “आजकल रेलगाड़ी में पाकेटमारी खूब होती है। हम सभी अपने-अपने पाकेट से होशियार रहें।” नौजवान की बातों से सभी सकते में आ गए और अपनी-अपनी जेब, सामान पर लोगों का ध्यान बंट गया। दो स्टेशन के बाद तीसरे स्टेशन पर गाड़ी रुकने पर एक महाशय, जिन्हें इसी स्टेशन पर उतरना था, अपना हैंडबैग बेचनी से खोज रहे थे, लेकिन नहीं मिल रहा था। इतने में उनकी बगल में खड़ा व्यक्ति जोर-जोर से चिल्लाने लगा, क्योंकि उसका पर्स जेब से गायब था। एक भारी-भरकम व्यक्ति जो डिब्बे में खिड़की के पास बैठे थे उनकी कमीज का पाकेट काटकर कोई सारे रुपये ले चुका था और वे कटे हुए पाकेट को लोगों को दिखाए जा रहे थे। पूरे डिब्बे में शोरगुल मचा हुआ था। परन्तु उस कुरता-पाजामा पहने हुए दुबला-पतला नौजवान का कहीं पता नहीं था। वह शायद पिछले स्टेशन पर ही उतर गया था।

—:o:—

प्रेमसी की पीड़ा

● ब्रजमोहन प्रसाद

लेखाकार

रास्ते में राही तो अनेक मिलते हैं,
लेकिन मिलता नहीं है कोई हम सफर।
रास्ते में मिलती हैं अनेक नजर,
पर मिल न सकी मुझे वह साफ नजर॥

मंजिल भी दूर है और रास्ते भी अंजान,
मिलते अनेक हैं पर मिलते नहीं कदरदान।
जिन्दगी हर चौराहे पर लड़खड़ाती है,
और अंजान रास्ते पर बढ़ जाती है॥

मंजिल तो मेरी है, मैं जानती हूँ
मगर मेरे प्रियतम को मैं नहीं पहचानती हूँ।
मैं सोचती कि कोई प्यार न दे जाए,
बेहतर हो कि कुछ दूर ही मुझे छोड़ जाए॥

सानेट (१)

हे विराट कवि !

● गिरिजानन्दन

से० नि० अनुभाग अधिकारी

जैसे किसी काँच मन्दिर में अवलोके कोई अपनी छवि —

ताल-ताल पर लघु-विशाल नव चित्र सदा बनते फिर मिटते,

सांध्य-उषा दिनकर-प्रकाश सम कभी प्रसारित, कभी सिमटते,

अपनी छवि पर मुग्ध आप कब से निहारते, हे विराट कवि ?

सरल सत्य हे, निज ऋजुता को आवंटित कर आत्म-किरण में,

दे-दे, अगणित रूप रंग गुण शून्य वियत में दृश्य रचाते—

नाद-निनाद कठोर मृदुल भर काल-चक्र पर उन्हें नचाते

फिर समेटते जाते दृश्यावलियों को निस्सीम गगन में !

है कोई उद्देश ? व्योम में सतत विविध गुण चित्र बनाते,

कौन राज है छिपा कि सचर-प्रति सचर वे मिटते जाते ?

हे रहस्य-पति ! जरा बताओ, तुम भी कितने भूखे दर्शक—

देख-देख इन चित्रावलियों को अबतक भी नहीं अघाते ?

मैं अपूर्ण परिमाण अंशधर, तुम परिपूर्ण और परिव्यापक,

तुम परिधि हो, तुम्हीं केन्द्र हो, विस्तारक, धारक, संहारक ।



सानेट (२)

चाहे कोई 'वाद' रहेगा

किसी देश के किसी काल में चाहे कोई 'वाद' रहेगा —
बलवानों का ठेंगा बरबस तना रहेगा कमजोरों पर;
जबरदस्त का डंडा सिर पर, रह जाएँगे दीन आह भर,
लाठी वाला बनहीनों के आगे आकर भैंस गहेगा !

बोल रहा इतिहास पुरातन पृष्ठ-पृष्ठ में गला फाड़कर —
बलवानों से लुटता आया कितने सोमनाथ का सोना,
साहस के पुतलों से शासित रहा जगत का कोना-कोना,
यह दुनिया नचती आई है मेधा और भुजा के बल पर ।

मेधा और भुजा के बल पर यह सारा संसार नाचता !
मेधा और भुजा के बल की अमर कथा इतिहास बांचता !
बन उठता तत्क्षण विराट उस बीने ठिगने वामन का छल ।

डग भरता दैत्याधिप बलि की भूमि याचता, पीठ जांचता ।
बल-मेधा संपन्न अल्प जन जग के केन्द्रक, जग की हलचल;
गढ़ते कहीं समस्याएँ हैं और कहीं पर देते हैं हल ।



❖
❖
❖ हिन्दी अपनाइये — देश का गौरव बढ़ाइये । ❖
❖
❖ ❖

सानेट (३)

प्याले टूटे ...

आज सबेरे ठोकर खाकर सहसा मेरे प्याले टूटे;
गरम चाय की हल्की-हल्की चुस्की मैं लेने वाला था,
इसी बहाने मधुर भुलावा मन को मैं देने वाला था,
तभी अचानक लगते करके गिरे धरा पर क्षण में फूटे !

ज्वार उठा चितित मानस में, लेकिन यह परवाह व्यर्थ है ।
भग्न हुआ करते जीवन में कितने अरमानों के प्याले
रस ढलकर निज अंगों पर ही ढलका देते कितने छाले,
इन प्याले-छाले में नित घुटते रहने की चाह व्यर्थ है ।

नूतनता की ठोकर खाकर पूर्व-मान्यता ढह जाती है,
घटनाओं के क्षिप्रवाह में रुढ़ि-शिलाएँ बह जाती हैं—
छन्द टूटते, भाव टूटते, टूटा करते शशि-ग्रह-तारे

क्या कोई भी चीज सृष्टि में नित्य अवस्थित रह पाती है ?
सृष्टि-नियंता निखिल व्योम में ये बहुरंजित चित्र पसारें
इन टूटे-फूटे प्यालों से करता रहता सतत इशारे ।



स्वामी विवेकानन्द

डा० प्रेमनिवास मिश्र

निधि-शिक्षा

भारतीय मनीषियों की परम्परा में स्वामी विवेकानन्द का नाम इतना आदरणीय इसलिए है कि इन्होंने अन्य साधकों की तरह समाज से विमुख होकर केवल आध्यात्मिक धरातल पर मोक्ष की बात नहीं की; इन्होंने स्पष्ट कहा कि जो दर्शन हमें रोटी नहीं दे सकता और हमारे आसूँ नहीं पोंछ सकता वह मिथ्या है। इसी मानवीय दृष्टिकोण के आलोक में इन्होंने वेदांत की जैसी मीमांसा की वह अद्वितीय है। इसकी प्रेरणा इन्हें अपने परमादरणीय गुरु श्री रामकृष्ण परमहंस से प्राप्त हुई थी जिन्हें दया और क्षमा का महासागर कहा जाता है। अनपढ़ होने के बावजूद श्री परमहंस को जो आध्यात्मिक ज्योति सहज ही प्राप्त थी उसी की प्रेरणा विवेकानन्द के सम्पूर्ण जीवन को प्रकाशित करती रही, यही कारण है कि परमहंस के दिवंगत होने पर विवेकानन्द ने उनके नाम पर 'रामकृष्ण मिशन' जैसी एक संस्था चलायी जो विश्व के कोने-कोने में मुफ्त शिक्षा, चिकित्सा तथा तरह-तरह के अनुदानों के सहारे जन कल्याण का कार्य करती रही है।

आजीवन अविवाहित रहकर विवेकानन्द ने जन-कल्याण के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन उत्सर्ग कर दिया। जात-पात, छुआ-छूत, कर्मकाण्ड और तमाम तरह के अन्धविश्वासों पर इन्होंने प्रहार किया। इन्होंने दुनिया के सभी धर्मों की एकता पर बल दिया। इनका ऐसा विश्वास था कि हमारा भारतीय दर्शन और हमारी सांस्कृतिक विरासत दुनिया में सर्वश्रेष्ठ है। सच्चे ज्ञान के साथ-साथ सच्चा कर्म ही हमें महान बना सकता है, हमें देवत्व की सीढ़ी तक पहुँचा सकता है। आत्मा की सही पहचान ही हमें सन्मार्ग पर लाएगी और सत्कर्म ही हमें ऊँचा उठाएगा। गीता की 'स्थित-प्रज्ञता' के वह कायल थे। 1894 में शिकागो में दिए गए अपने भाषण में उन्होंने भारतीय दर्शन की जो प्रतिष्ठा स्थापित की उसने संसार के दार्शनिकों को विस्मित कर दिया। उन्होंने इस बात पर हमेशा बल दिया कि हमारे अन्दर न तो किसी तरह का डर होना चाहिए न किसी तरह की हीन-भावना। समाज में वर्ग विषमता के वे दुश्मन थे। यों कहा जाये कि वे महान समाजवादी थे और दर्शन में शंकराचार्य के अनुवर्ती तथा मानवीयता में महात्मा गांधी के परवर्ती तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी

रूपसी

● श्याम किशोर प्रसाद

लेखापाल

अनुभाग-निधि विविध

देखो, कैसी है रूपसी

प्रकृति की रंग में ढली पड़ी

शायद विधाता की विशेष स्नेह में

बनी खड़ी यह रूपसी

यौवन में सुन्दरता है सनी हुई

जो कूट-कूट है भरी पड़ी

वह सुन्दरी नहीं सुन्दरता की

प्रतिमूर्ति सौन्दर्याङ्गा है रूपसी

शान्तभाव में मग्न पड़ी

उसे दुनिया का गम नहीं

वृक्षों-सी बनाये शान्त रूप

धारण की हुई है रूपसी

वृक्षों जैसी हरी-भरी

लगती जैसी नवोढ़ा-कलि

शायद वसंत में संजोयी गयी

अतिसौन्दर्यरूप में ढली है रूपसी

कैरम का खेल

भारत भूषण, व० ले० प०

अवैतनिक महासचिव, बिहार राज्य कैरम संघ, पटना एवं
कार्यकारिणी सदस्य, अखिल भारतीय कैरम संघ, नई दिल्ली।

हर प्रकार के खेल का अपना एक इतिहास है। कैरम के खेल के इतिहास में 15 अक्टूबर 1988 का दिन चिरस्मरणीय रहेगा क्योंकि इसी दिन अन्तर्राष्ट्रीय कैरम कांग्रेस के तत्वावधान में मद्रास में अन्तर्राष्ट्रीय कैरम फेडरेशन की स्थापना की गई। अन्तर्राष्ट्रीय कैरम फेडरेशन के अध्यक्ष स्विट्जरलैंड निवासी श्री माटिन मेयर के शब्दों में—“आज कैरम एक ऐसा साधन है जिसके माध्यम से हम सम्पूर्ण विश्व में एकता और भाईचारे की भावना को फैला सकते हैं।” फेडरेशन के महासचिव भारत के बंगारू बाबू ने स्थापना दिवस पर अपना उद्गार प्रकट करते हुए कहा कि “मुझे फक्र है कि इस भारतीय मूल के खेल का मुख्यालय भारत में ही रह पाएगा। ज्ञातव्य हो कि अन्य किसी खेल का अन्तर्राष्ट्रीय मुख्यालय भारत में नहीं है।

कैरम खेल से लगभग हर भारतीय परिचित है। घर-घर में खेले जाने वाले इस खेल का जन्मदाता भारत ही माना जाता है। कालान्तर में विभिन्न रूपों/आकारों से परिवर्तित होते हुए अब इसका वर्गीकार लकड़ी का आधार सम्पूर्ण विश्व में अपनाया गया है। ऐसा प्रमाण है कि पहले लोग जमीन पर आकार बनाकर इसे खेला करते थे।

इस खेल को नियमबद्ध कर एवं सर्वमान्य बनाकर खेलने हेतु सर्वप्रथम अखिल भारतीय कैरम संघ की स्थापना 1955 में, मद्रास में की गई। धीरे-धीरे भारत के विभिन्न प्रान्तों में यही नियम एवं खेलने का तरीका अपनाया जाने लगा और अब इसे अन्तर्राष्ट्रीय कैरम फेडरेशन ने भी थोड़ा संशोधित कर अपना लिया है, यह हमारे लिए गौरव की बात है। वैसे आज भी बंगाल में बड़े आकार वाले ‘कट पॉकेट’ कैरम बोर्ड पर खेलने का प्रचलन है किन्तु इसे मान्यता नहीं मिलने के कारण धीरे-धीरे इसका प्रचलन लुप्त हो रहा है। 1956 से 1989 तक अखिल भारतीय कैरम संघ का मुख्यालय मद्रास में ही रहा। 1990 से इसका मुख्यालय नई दिल्ली में है।

1988 में गठित अन्तर्राष्ट्रीय कैरम फेडरेशन द्वारा निर्मित नियमों को आज विश्व के सभी देशों ने अपनाया है। इसके अन्तर्गत मानक खेल सामग्री आकार एवं सामान्य नियम इस प्रकार हैं :-

बोर्ड का आकार—प्लेइंग सरफेस 29 वर्ग इंच, फ्रेम 2.5 इंच चार पाकेट प्रत्येक 1 $\frac{3}{4}$ इंच व्यास का, कैरममेन (गोटी)—9 सफेद, 9 काली तथा 1 लाल रंग की जिसे क्वीन (रानी) कहा जाता है। प्रत्येक गोटी का आकार 1 $\frac{1}{4}$ इंच व्यास, $\frac{3}{8}$ इंच मोटाई एवं वजन 5.5 ग्राम होना चाहिए। इसे एक स्ट्राइकर—1 $\frac{5}{8}$ इंच व्यास एवं वजन 15 ग्राम की सहायता से खेला जाता है। बैठने के लिए स्टूल (आवश्यकतानुसार चार या दो) ऊंचाई 16 से 19 इंच। कैरम बोर्ड को एक 25 से 26 $\frac{1}{2}$ इंच ऊंचाई वाले स्टैंड पर रखकर खेला जाता है। चूँकि इस खेल के लिए कम स्थान की आवश्यकता होती है इसलिए इस खेल को ‘इनडोर गेम’ की श्रेणी में रखा गया है। पूरे खेल को 25 प्वाइंट के आग्रार पर खेला जाता है जिसमें प्रत्येक सफेद एवं काली गोटी का अंक 1 तथा क्वीन (रानी) का अंक 3 माना जाता है। 22 अंक के

वश्चात् क्वीन का मान (अंक) नगण्य हो जाता है। एकल में इसे दो प्रतियोगी तथा द्वितीयक में चार- (दो-दो प्रतियोगियों) के दो दलों के बीच खेला जाता है। सम्पूर्ण खेल एक निर्णायक की उपस्थिति में खेला जाता है। इस खेल में मनोरंजन के साथ-साथ मानसिक संतुलन एवं चित्त की एकाग्रता और उंगली पर नियंत्रण रखने का अभ्यास होता है।

भारत में दक्षिणी एवं पश्चिमी प्रान्तों को वर्चस्व इस खेल में रहा है। अब तक कुल 21 सीनियर 20 जूनियर तथा 18 सब-जूनियर एवं अन्तर-राज्य कैरम प्रतियोगिताएं आयोजित की जा चुकी हैं। सीनियर चैम्पियनशीप में 9 बार तामिलनाडु तथा 7 बार महाराष्ट्र की टीमों ने विजय प्राप्त की है। मद्रास के मारिया करुदयम ने सर्वाधिक 6 बार एकल पुरस्कार विजेता एवं प्रथम विश्वकप कैरम चैम्पियन-शीप में चैम्पियन बनने का गौरव प्राप्त किया है।

1985, 1987, 1989 में क्रमशः जुरिच (स्वीटजरलैंड), बर्लिन तथा भारत में हुए अन्तरराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा में भी भारतीयों को सफलता मिल सकी। 1991 में नई दिल्ली, भारत में आयोजित प्रथम विश्वकप में भी भारत को प्रथम स्थान प्राप्त हुआ। 1992 में मालदीव में आयोजित प्रथम यूथ विश्वकप में भी भारत को प्रथम स्थान मिला।

महालेखाकार कार्यालय, पटना का प्रदर्शन इस खेल में काफी सराहनीय रहा है। अन्तर ऑडिट कैरम प्रतियोगिता में 1980 से लगातार हमारी टीम भाग लेती रही है। 1985 में भुवनेश्वर में आयोजित पूर्वी-क्षेत्र अन्तर ऑडिट कैरम प्रतियोगिता में हम विजयी हुए। इस दल में इस कार्यालय के निम्नलिखित सदस्यों ने भाग लिया :— 1. गजेन्द्र नाथ, व० ले० परी० 2. अवध किशोर शरण, व० ले० परी०, 3. राम शरण जायसवाल, व० ले० परी० 4. भारगव भूषण, व० ले० परी० 5. प्रदीप कुमार सिन्हा, व० ले० परी०। इसके अतिरिक्त 1980 से 1990 के बीच मैंने स्वयं दो बार एकल प्रतियोगिता में सफलता प्राप्त की तथा अखिल भारतीय ऑडिट कैरम प्रतियोगिताओं में भाग लेने का गौरव प्राप्त किया। कैरम खेल के क्षेत्र में संगठनात्मक स्तर पर भी इस कार्यालय को अन्य उपलब्धियां प्राप्त हुई हैं। मुझे बिहार राज्य का प्रथम राष्ट्रीय कैरम निर्णायक बनने का भी अवसर प्राप्त हुआ है। अनेक राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में मुझे सहायक निर्णायक एवं मुख्य निर्णायक की भूमिका के निर्वाह का गौरव प्राप्त है। 1991 में सम्पन्न हुए प्रथम विश्वकप कैरम प्रतियोगिता में मुझे आयोजन समिति के सह-सचिव का कार्य-भार सौंपा गया और जर्मनी के टीम का स्थानीय प्रबन्धक भी नियुक्त किया गया। इसी कार्यालय के अवध किशोर शरण व० ले० परी० को विश्वकप कैरम चैम्पियन शीप में निर्णायक बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ एवं वे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के निर्णायक बन सके। श्री शरण के अतिरिक्त इस कार्यालय के प्रेम किशोर प्रसाद लेखाकार, एवं प्रभाष चन्द्रा को भी राष्ट्रीय निर्णायक बनने का गौरव प्राप्त हुआ। बिहार राज्य कैरम दल का प्रथम कप्तान बनने का गौरव भी इस कार्यालय के बाबू कमलदेव सिंह, व० लेखाकार को प्राप्त हुआ है।

इसके अलावा निम्नलिखित खिलाड़ियों को विभिन्न प्रतियोगिताओं में इस कार्यालय के कैरम टीम का प्रतिनिधित्व करने का अवसर सुअवसर प्राप्त हुआ है :—

1 सर्वश्री अमरनाथ सिंह, 2 श्री कमलदेव सिंह, 3 श्री सुदीप्ता गुप्ता, 4 श्री एस० ए० फौजी, 5 श्री देवेश कुमार सिन्हा, 6 श्री प्रभास चन्द्र, 7 श्री इन्द्रनाथ गांगूली, 8 श्री अरुण

कुमार सहाय, 9 श्री रमेश कुमार, 10 श्री सुनील कुमार वर्मा, 11 श्री आलोक कुमार, 12 श्री सी० एस० झा, 13 श्री एस० एस० तिवारी, 14 श्री किरण कुमार, 15 कुमार रामा शंकर सिंह, महिला कैरम टीम का प्रतिनिधित्व निम्नलिखित खिलाड़ियों ने किया :—

1. सुश्री सुमन तिग्गा, 2. श्रीमती कृष्णा दास 3 सुश्री सुधा एम० जॉन एवं 4 औरगन करकेट्टा

1989 में नवगठित बिहार राज्य कैरम संघ का अवैतनिक महासचिव के पद के लिए मेरा चयन हुआ। मेरी कार्य-कुशलता और सफल संचालन दक्षता को ध्यान में रखते हुए मेरा चयन अखिल भारतीय कैरम संघ की कार्यकारिणी समिति में भी कर लिया गया। कैरम के खेल को एक नया आयाम प्रदान कर राष्ट्रीय स्तर पर इस खेल के भविष्य को संवारने वाले महासंघ का सस्य चना जाना निस्संदेह मेरे लिए गौरव की बात है जो इस कार्यालय के सभी सह कर्मियों एवं पदाधिकारियों के प्रेम एवं सहयोग से ही संभव हो सका है।

इस खेल को भारत सरकार द्वारा भी समय-समय पर प्रोत्साहित किया जाता रहा है। 1970 में सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त होने के साथ ही राष्ट्रीय चैम्पियनशीप के लिए सहायता राशि दी जाती रही है। अपने पत्रांक 6/2/85 दिनांक 30/1/89 द्वारा भारत सरकार ने आगे कर्मचारियों को राष्ट्रीय चैम्पियनशीप में भाग लेने हेतु आर्थिक सहायता प्रदान करने तथा उत्कृष्ट खिलाड़ियों को सरकारो नौकरियों में लेने सबंधी आदेश भी निगत की है। अबतक विभिन्न प्रान्तों में स्थित लगभग 8 महालेखाकार कार्यालयों में कैरम के खिलाड़ियों की नियुक्ति हुई है।

अतः इस खेल को प्रोत्साहित करना हम सभी भारतीयों का परम कर्तव्य है। आज हम इस खेल में विश्व चैम्पियन हैं। यह खेल भारतीय आर्थिक-सामाजिक स्थिति के सर्वथा अनुकूल है जिस देश का हर नागरिक, बच्चा, बूढ़ा, मर्द, औरत सभी खेल सकता है। इस खेल के माध्यम से भविष्य में हम अपनी राष्ट्रीय पहचान को अक्षुण्ण रखने में सफल हो सकें इसके लिए हमलाग इस खेल में रुचि लें और घर-घर में लोकप्रिय भारत के इस खेल को सहयोग प्रदान कर अपनी राष्ट्रीय अस्मिता को कायम रखने के लिए आगे आएँ।

खेल कोई भी हो लेकिन राष्ट्रीय खेल की परिभाषा में वही सही बैठता है जो उस राष्ट्र के आम लोगों तक पहुँच सकने में सक्षम हो। अन्य कोई भी खेल में इतना खर्च है तथा इतना ज्यादा जगह की आवश्यकता होती है कि वह कैरम की तरह घर-घर में नहीं पहुँच सकता। यहाँ तक कि कम खर्च का किन्तु थका देने वाला मानसिक शक्ति का खेल भी हमारी परिस्थिति के अनुकूल नहीं है। क्या आम भारतीय के बस में वैसा खेल खेलना संभव है जिसमें घंटों समय देना पड़े और दिन भर व्यर्थ जाए। हमें इसी 24 घटों में रोजी-रोटी की जुगाड़ भी करना पड़ता है। यहाँ तो हमें सिर्फ उसी खेल को बढ़ावा देना चाहिए जो कम समय, जगह, खर्च तथा कम शारीरिक एवं मानसिक शक्ति का ह्रास के साथ खेला जा सक। जिस खेल को राष्ट्र के आम नागरिक न खेल सके, कारण चाहे जो भी हो, सिर्फ मूक दर्शक बन कर अपने ही बीच के चन्द अमीरों को ही नेतृत्व करने दें, वह खेल राष्ट्रीय खेल कैसे हो सकता है। वैसा खेल तो अमीरों का खेल बन कर रह जाएगा तथा राष्ट्रीय भावना से कभी न जुड़ सकता है। हम सभी आगे आएँ एवं अपने इस लोक-प्रिय खेल को राष्ट्रीय खेल का दर्जा दें तथा खेल जगत में अपनी राष्ट्रीय पहचान इस खेल के माध्यम से बनाएँ। कहीं देर न हो जाए तथा भारतीय हाकी की तरह यह खेल भी बाहर न चला जाए।

राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के लिए

(वर्ष १९९२-९३ के वार्षिक कार्यक्रम से उद्धृत)

5.1 पत्राचार में हिन्दी का प्रयोग

“क” क्षेत्र

- (अ) ‘क’ क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयों/ विभागों/ कार्यालयों (निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि सहित) से ‘क’ और ‘ख’ क्षेत्रों में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों, किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र की सरकारों और उसके कार्यालयों तथा उनमें व्यक्तियों को भेजे जाने वाले पत्रादि 100%
— नियम 3 (1), 3 (2) (क), 4 (ख), 4 (ग)

- (आ) ‘क’ क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयों/ विभागों/ कार्यालयों (निगमों, उपक्रमों, बैंकों, आदि सहित) से ‘ग’ क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों आदि को भेजे जाने वाले पत्रादि 35%
— नियम 4 (घ)

(अधिसूचित कार्यालयों को छोड़कर शेष को अंग्रेजी अनुवाद भेजा जाए)

‘ख’ क्षेत्र

- (अ) ‘ख’ क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयों/ विभागों/ कार्यालयों आदि से ‘क’ तथा ‘ख’ क्षेत्रों में स्थित मंत्रालयों/ विभागों/ केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों (निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि सहित) को भेजे जाने वाले पत्रादि 70%
— नियम 4 (घ)

- (आ) ‘ख’ क्षेत्र में स्थित मंत्रालयों/ विभागों/ केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों (निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि सहित) आदि से ‘ग’ क्षेत्र में स्थित मंत्रालयों/ विभागों/ केन्द्रीय

सरकारी कार्यालयों (निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि सहित) को भेजे जाने वाले पत्रादि

35%

—नियम 4 (ङ)

(अधिसूचित कार्यालयों को छोड़कर शेष को अंग्रेजी अनुवाद भी भेजा जाए)

- (इ) ‘ख’ क्षेत्र में स्थित मंत्रालयों/ विभागों/ केन्द्रीय सरकारी कार्यालयों (निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि सहित) आदि से ‘क’ और ‘ख’ क्षेत्रों में किसी राज्य, संघ सरकार, संघ राज्य क्षेत्र के कार्यालयों अथवा व्यक्तियों आदि को भेजे जाने वाले पत्रादि 100%

—नियम 3 (1), 3 (2) (क), 3 (2) (ख)

‘ग’ क्षेत्र

- (अ) ‘ग’ क्षेत्र में स्थित मंत्रालयों/विभागों/केन्द्रीय सरकारी कार्यालयों (निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि सहित) से ‘क’, ‘ख’ और ‘ग’ क्षेत्रों में स्थित मंत्रालयों/विभागों/केन्द्रीय सरकारी कार्यालयों आदि को भेजे जाने वाले पत्रादि 35%

—नियम 4 (घ), 4 (ङ)

- (आ) ‘क’ और ‘ख’ क्षेत्रों में स्थित राज्य, संघ राज्य क्षेत्र के कार्यालयों तथा व्यक्तियों को भेजे जाने वाले पत्रादि 75%
—नियम 3 (1), 3 (2), (क), 3 (2) (ख)

रक्षा मंत्रालय की यूनिटें (‘क’, ‘ख’ और ‘ग’ तीनों क्षेत्रों के लिए)

- (क) तीनों सेना मुख्यालयों से रक्षा मंत्रालय व दूसरे मंत्रालयों के साथ पत्राचार 80%

- (ख) थल सेना मुख्यालय तथा थल सेना के कमाण्ड कार्यालयों के बीच व थल सेना के

अन्य सभी यूनिटों तथा कमाण्ड कार्यालयों के समस्त पत्राचार का 35%

(ग) नौ सेना तथा वायु सेना के मुख्यालयों और कमाण्ड कार्यालयों के बीच आपसी पत्राचार तथा इन्हीं सेनाओं के अन्य सभी यूनिटों तथा कमाण्ड कार्यालयों के समस्त पत्राचार का 50%

(घ) उपर्युक्त लक्ष्य तीनों सेनाओं के उन कार्यालयों को लागू होंगे जिनमें मुख्यतः सेना अधिकारी तथा अन्य "अदर रैंक" कार्यरत होते हैं।

(ङ) अन्य पत्र व्यवहार और कार्यक्रम की अन्य मदों के लक्ष्य वही होंगे जो इस कार्यक्रम में निर्धारित किए गए हैं।

5.2 तार/बेतार/टेलेक्स/फैक्स आरेख (नक्शे/ड्राइंगें)

'क' क्षेत्र

'क' क्षेत्र में स्थित मंत्रालयों/विभागों, केन्द्रीय कार्यालयों (निगमों, उपक्रमों बैंकों आदि सहित) से भेजे जाने वाले तार/बेतार/टेलेक्स/फैक्स आरेख (नक्शे/ड्राइंगें) 60%

'ख' क्षेत्र

'ख' क्षेत्र में स्थित मंत्रालयों/विभागों/केन्द्रीय कार्यालयों (निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि सहित) से भेजे जाने वाले तार/बेतार/टेलेक्स/फैक्स आरेख (नक्शे/ड्राइंगें) 45%

'ग' क्षेत्र

'ग' क्षेत्र में स्थित मंत्रालयों/विभागों/केन्द्रीय कार्यालयों (निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि सहित) से भेजे जाने वाले तार/बेतार/टेलेक्स/फैक्स आरेख (नक्शे/ड्राइंगें) 10%

(राजभाषा विभाग का दिनांक 29-3-1990 का संकल्प सं० 12015/34/87-रा० भा० (त० क०) की मद सं० 25 देखिए)

5.3. देवनागरी टाइपराइटरों, (साधारण, पिन-पाइंट, बुलेटिन, पोर्टेबल तथा बिजली चालित) हिन्दी टंककों और हिन्दी आशुलिपिकों का अनुपात (कुल की तुलना में)

'क' क्षेत्र

(अ) मंत्रालय/विभाग 45%
(आ) अन्य कार्यालय (निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि सहित) 75%

(राजभाषा विभाग द्वारा जारी दिनांक 29-3-1990 के संकल्प सं० 12015/34/87-रा० भा० (त० क०) के अनुसार वर्ष 1994-95 के अंत तक—

- 1) देवनागरी के टाइपराइटर 90%
- 2) हिन्दी टंककों/हिन्दी आशुलिपिकों की संख्या में 21% वृद्धि प्रति वर्ष होती है।

'ख' क्षेत्र

मंत्रालय/विभाग/केन्द्रीय कार्यालय (निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि सहित) 45%
(रा० भा० विभाग द्वारा जारी दिनांक 29-3-1990 के संकल्प सं० 12015/34/87-रा० भा० (त० क०) के परिप्रेक्ष्य में वर्ष 1994-95 के अंत तक—

- (1) देवनागरी टाइपराइटरों की संख्या 66 2/3 %
- (2) हिन्दी टाइपिस्टों/आशुलिपिकों की संख्या में 20% वृद्धि प्रति-वर्ष होती है।

'ग' क्षेत्र

मंत्रालय/विभाग/केन्द्रीय कार्यालय (निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि सहित) 18%
(रा० भा० विभाग द्वारा जारी दिनांक 29-3-1990 के संकल्प सं० 12015/34/87-रा० भा० (त० क०) के अनुसार वर्ष 1994-95 तक—

- (1) देवनागरी टाइपराइटरों की संख्या 20%
- (2) हिन्दी टाइपिस्टों/आशुलिपिकों की संख्या में 20% वृद्धि प्रतिवर्ष होती है)

'क', 'ख' और 'ग' तीनों क्षेत्रों के लिए कार्यक्रम

5.4 निर्धारित प्रयोजनों के लिए हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग

(क) निम्नलिखित प्रयोजनों के लिए हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग सुनिश्चित किया जाए—

- (1) संकल्प, सामान्य आदेश, नियम, अधिसूचनाएं प्रशासनिक या अन्य प्रतिवेदन तथा प्रेस विज्ञप्तियां,
- (2) संविदाएं, करार, अनुज्ञप्तियां, अनुज्ञापत्र, निविदा सूचनाएं तथा निविदा प्रारूप;
- (3) संसद के किसी सदन या सदनो के समक्ष रखे जाने वाले प्रशासनिक तथा अन्य प्रतिवेदन और राजकीय कागज-पत्र।

— राजभाषा अधिनियम की धारा 3 (3)

(ख) निम्नलिखित प्रक्रिया साहित्य तथा स्टेशनरी आदि के लिए हिन्दी व अंग्रेजी का द्विभाषिक प्रयोग सुनिश्चित किया जाए:—

- (1) मैन्युअलों, साहताओं और अन्य प्रक्रिया साहित्य को हिन्दी और अंग्रेजी में द्विभाषिक रूप में मुद्रित/ साइक्लोस्टाइल किया जाए और प्रकाशित किया जाए। इस प्रकार जो साहित्य अनुवाद हो चुका है उसे प्रकाशित कराने के लिए विशेष प्रयत्न किए जाएं।
- (2) फार्म और रजिस्ट्रों के शीर्ष हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में ही मुद्रित/ साइक्लोस्टाइल कराए जाएं।
- (3) नामपट्ट, सूचना-पट्ट, पत्रशीर्ष और लिफाफो तथा स्टेशनरी की अन्य मदों पर छपे या उत्कीर्ण लेख हिन्दी और अंग्रेजी में दिए जाएं।

—नियम 11

(ग) सरकारी क्षेत्र के उपक्रमों द्वारा तैयार किए गए सामान पर उनके नाम आदि हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में लिखे जाएं। इसके अतिरिक्त उनसे संबंधित विवरण भी हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में लिखे जाएं।

[राजभाषा विभाग का का० ज्ञा० सं० 14011/1/76

—रा० भा० (क-1)

दिनांक 27-2-1976]

5.5 केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों को राजपत्र में अधिसूचित करना

जिन कार्यालयों के 80 प्रतिशत या उससे अधिक कर्मचारियों (समूह के कर्मचारियों को छोड़कर) ने हिन्दी का कार्य-साधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है उन कार्यालयों के नाम राजपत्र में अधिसूचित किए जाएं। इस संबंध में प्रत्येक मंत्रालय द्वारा एक सर्वेक्षण किया जाए और उसके पाठ्याम राजभाषा विभाग को सूचित किए जाएं।

नियम 10 (4)

5.6 सरकारों विज्ञापन हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में जारी करना

केन्द्रीय सरकार के सभी कार्यालयों द्वारा सभी विज्ञापन हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में साथ-साथ जारी किए जाए और उन्हें संवाधित भाषा के समाचार पत्रों में प्रकाशित कराया जाए। संबंधित कार्यालयों द्वारा विज्ञापन सामग्री को हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार किया जाए और दोनों भाषाओं में एक साथ विज्ञापन और दृश्य प्रचार निदेशालय को भेजा जाए। कार्यालयों द्वारा सीधे प्रकाशन के लिए भेजे जाने वाले विज्ञापन भी हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में तैयार किए जाए और साथ-साथ संवाधित भाषाओं की पत्र-पत्रिकाओं को जारी किए जाएं। (जहां आवश्यक हो इसके लिए अपने मुख्यालय/ मंत्रालय की सहायता ले ली जाए)

[कार्यालय ज्ञापन सं० 2/20/69 रा० भा० दिनांक 6 अप्रैल, 1971 और कार्यालय ज्ञापन सं० 1/14034/

17/86-रा० भा० (क-1) दिनांक

23 जनवरी, 1987]

5.7 राजभाषा नीति के अनुपालन के लिए न्यून-तम हिन्दी पदों का सृजन

हिन्दी के प्रगामी और सांविधिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक हिन्दी पदों के सृजन के लिए प्राथमिकता के आधार पर कार्रवाई की जाए। इस संबंध में राजभाषा विभाग का दिनांक 12-7-1988 का कां.ज्ञा.सं. 13035/4/88-रां.भा. (ग) तथा दि. 5.4.1989 का कां.ज्ञा.सं. 13035/3/88-रां.भा. (ग) विशेष रूप से देख लिए जाएं।

5.8. सेवाकालीन विभागीय या पदोन्नति परीक्षाओं में प्रश्न-पत्रों के उत्तर हिन्दी में देने का विकल्प

सभी सेवाकालीन विभागीय तथा पदोन्नति परी-

क्षाओं में, जिनमें अखिल भारतीय स्तर पर ली जाने वाली परीक्षाएँ भी शामिल हैं, इन प्रश्न पत्रों के उत्तर हिन्दी या अंग्रेजी में लिखने की छूट दी जाए। प्रश्न-पत्र हिन्दी-अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार कराए जाएँ और साक्षात्कार (इंटरव्यू) में भी हिन्दी में उत्तर देने की छूट दी जाए। लिखित परीक्षा तथा साक्षात्कार में हिन्दी भाषा माध्यम की उपलब्धता के बारे में अभ्यर्थियों को यथास्थिति/ विज्ञापन द्वारा पहले से ही साफ तौर पर बता दिया जाए।

[कां.ज्ञा.सं. 14012/11/87—रां.भा. (ग) दिनांक 21-9-1987 और कां.ज्ञा.सं. 14012/9/89—

रां.भा. (ग) दिनांक

27-6-1989]

टिप्पण वाक्यांश

1. After adequate couridexation
2. After consultation with
3. Approved as per remarks in the margin
4. Attention is invited to
5. Beyond the said period
6. Day to day administrative work.
7. During the course of discussion
8. For expression of opinion
9. For favourable action
10. For perusal and return
11. Hard and fast rule
12. Has no comments to make
13. Held in abeyance
14. In his direction
15. In modification of
16. In order of priority
17. In the prescribed manner
18. It is suggested
19. It may further be added
20. Sanctioned as a special case

समुचित विचार के बाद।

..... से परामर्श करके।

हाशिये की टिप्पणी के अनुसार अनुमोदित।

.....की ओर ध्यान आकषित किया जाता है।

उक्त अवधि के बाद।

नित्य का प्रशासनिक कार्य।

विचार-विमर्श के दौरान।

मत प्रकट करने के लिए/ राय देने के लिए।

अनुकूल कार्रवाई के लिए।

देखकर लौटाने के लिए।

पक्का नियम।

..... के/ कोई टीका-टिप्पणी नहीं करनी है।

रोक रखना/ स्थगित रखना।

स्वविवेक से/ अपनी समझ से।

का आशोधन करते हुए।

प्राथमिकता क्रम से।

विहित रीति से/ निर्धारित ढंग से।

यह सुझाव दिया जाता है/ सुझाव है।

यह भी बताया जाता है/ यह भी बता दिया जाय।

विशेष मामले के रूप में मंजूर किया गया।

गत ग्रीष्म वर्षा ऋतु आई

□ रघुनाथ प्रसाद, मुख्यालय

“शरत्काले वसन्ते च प्रावृट् काले चयागति” अर्थात् शरद, वसन्त और वर्षाकाल में जो गति होती है वह अन्य ऋतुओं में नहीं। वसन्त रसराज, वर्षा रसराश तथा शरद रसखानि मानी जाती है। रसराश ही रसराज रसखानि की कटि है जिसके बिना केवल बिना अर्थात् अभाव-अकाल ही सम्भव है। इसी पावस पर मुख्यालय में कार्यरत उप निदेशक (हिन्दी) श्री रघुनाथ प्रसाद लोकवाणी के माध्यम से सरस-वैज्ञानिक तथ्य प्रस्तुत कर रहे हैं “गत ग्रीष्म वर्षा ऋतु आई” में।

—सम्पादक (लेखापरीक्षा प्रकाश)

ग्रीष्म ऋतु के पश्चात् वर्षा ऋतु का आगमन कोई अस्वाभाविक नहीं है, ठीक वैसे ही जैसे कि एक अंग्रेज कवि के सरस हृदय से अंग्रेजी का सर्वदा सत्य पद ‘If winter comes can spring be far behind’ अनायास ही प्रस्फुटित हो गया था। भारतीय भूखण्ड में ग्रीष्म की प्रचण्डता का क्या कहना, इसके तपते अंगारे जन-जन प्राणी, पशु-पक्षी, लता तरुवरों, घाम-फूस और पौधों को तेज एवं उदीप्त उष्णता से शुष्क और निर्जीव कर देते हैं। हरीतिमा का विनाश कर देते हैं और जब चारों ओर त्रस्तता का कोहराम मच जाता है तो उस समय पावस ऋतु के आगमन की सहज कल्पना भी ‘तातल सैकत वारि-बिन्दु सम’ सुखद एवं तृप्तिदायक होती है। किष्किंधा कांड में मर्गदा पुरुषोत्तम श्रीराम जब पत्नि वियोग में संतप्त थे और धीरे-धीरे सीताजी की खोज में एक के बाद एक ऋतुओं का गुजरना जारी था तो संतप्त हृदय में ग्रीष्म की उष्णता वर्षा काल में काले मेघों का पर्वत शृंखला पर आगमन मात्र ही उन्हें चिर सुख प्रदान करने लगी और ‘गत ग्रीष्म वर्षा ऋतु आई, रहिहऊ निकट सैल पर छाई’ के ये शब्द शुष्क-जीवन को एक दिशा-निर्देश देने लगे जैसे फिर ‘वर्षा काल मेघ नभ छाये, गरजत लागत परम सुहाये’। नागार्जुन जी ने तो इसे किसी और रूप में ही देखा है ‘अमल धवल गिरि के शिखरों पर, बादल को घिरते देखा है’। कालिदासजी तो बाषाढ़ में उन काले-काले मेघों की संज्ञा विरहिणी के खुले काले कुन्तल या काली नागिन, कालि-रात्रि से करते हैं लेकिन वास्तव में ये ‘काले’ शब्द ‘बादन’ के साथ जुड़ कर अपनी शुष्कता को नहीं बल्कि सरसता को ही प्रदर्शित करते हैं जैसे ‘बरषहि जलद भूमि नियराये’। यद्यपि ये जल भरे धमण्डी घन अपने घनघोर गर्जन और वर्षण से मन मयूर को भयभीत अवश्य कर देते हैं लेकिन उनका द्रवित होकर धरित्री पर आना जन-जन प्राण पखेरू को अभय अखण्ड तृप्त जीवन असृत दान करते हैं क्योंकि इसके आने के पहले नागार्जुन जी के हृदय ‘महामेघ को ज्ञानानिल से, गरज-गरज भिड़ते देखा है’ या ‘तिक्त-मधुर विसतन्तु खोजते हंसों को तिरते देखा है’ देख चुका है। अतः इतना तो सभी मानते हैं कि वर्षा ऋतु का आगमन शुष्क जीवन की उष्णता से सुखद जीवन की सरसता की ओर अगला कदम है।

जब वर्षा ऋतु सचमुच आ जाती है तो उसका निरालापन कुछ और ही हो जाता है। ‘वह पावस का प्रथम दिवस जब पहली बूँद धरा पर आई, अंकुर फूट पड़ा धरती से, नव-जीवन ने ली अंगड़ाई’ सूखी धरती, पेड़-पौधों घास पत्तियों में हरीतिमा प्राप्त होती है उसे अगले ग्रीष्म तक के लिए अभय दान मिलता है। इतना ही नहीं, भारत भूखण्ड तो कृषि प्रधान देश है जिसे अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण जन-जीवन को सदा वर्षा पर निर्भर रहना पड़ता है। अगर समयोचित वर्षा न हो तो ‘का वर्षा जब कृषि सुखाने’ अर्थात् वीरानी एवं सूखी धरती पर किसान उस पपीहे की तरह आकाश की तरफ आँख लगाये बैठा रहता है कि कब आकाश के आँसू बूँद बनकर इस संतप्त बूढ़ी धरती की प्यास तृप्त करेंगे वर्षा होते ही कृषकों की बाँछें खिल उठती हैं और वे तन्मय होकर सपरिवार धरित्री की सेवा में ‘कृषि निरावाहि चतुर किसान’ रम जाता है। इसका यहीं अन्त नहीं होता। भारत के गांवों में कृषक कवि घाघ-घाघरी की कृषि संबंधी कहावतें वर्षा पर ही आधारित हैं। सूर्योदय, सूर्यास्त, चन्द्रोदय या चन्द्रास्त सभी समयों को बादल या आकाश का सम्बन्ध खेतों से सदियों से कृषकों के निरीक्षण में रहा है और वर्षानुवर्ष अवलोकन और अनुभव के पश्चात् वर्षा ऋतु

के आगमन का सही आकलन कर लेते थे। सन्दर्भ के लिए यदि सावन (जून-जुलाई) के शुक्ल पक्ष सप्तमी को सूर्य बादलों में छिपा उदित हो तो देव उठने (अर्थात् गोवर्धन पूजा) तक लगातार पानी होगा 'सावोन शुक्ला सप्तमी छिप के उगहि भान, तो लगी मेघा बरसे, जो लगी देव उठान' और ठीक उल्टा यदि सूरज बिना बादल का उदित दिखाई पड़े तो—'साओन शुक्ला सप्तमी उदै जे देखे भान, तुम जाओ पिआ मालवा हम जावै मुलतान' अर्थात् बिना बादल का उदित सूर्य 'सूखे' या 'अकाल' का द्योतक है। अतः अपनी-अपनी जीविका के लिए 'मालवा' या 'मुलतान' जाने को तैयार रहो। ठीक वैसे ही यदि उस दिन (सप्तमी को) यदि रात में बादल गरजे तो वह भी अकाल का सूचक है। पुनः अगर सावन (जून-जुलाई) में पुरवैया हवा चले तो कृषक अनुमान के अनुसार पानी नहीं बरसेगा और खेती नहीं होगी। अतः कृषकों को सलाह दी 'सावन मास वहै पुरवैया, वेचह बरद, कीनह गैया' अर्थात् बैलों को बेचकर गाय खरीदी जाना ज्यादा उत्तम होगा।

सावन की तरह भादो (जुलाई-अगस्त) में भी उनका अलग अलग अनुमान है जो सदियों से आधुनिक सिचाई के साधनों के प्रादुर्भाव के पहले, सत्य सिद्ध हुए हैं। बादल को देखकर मौसम का सही-सही अनुमान लगाना तथा उसीके अनुसार परिस्थिति योग्य बनाना बुजुर्गों के बायें हाथ का खेल था। अभी तो मौसम विज्ञान में उन्नति होने के कारण मौसम सम्बन्धी सही जानकारी 24-18 घण्टे पहले प्राप्त कर कृषकों या समुद्री नाविकों को सचेत कर दिया जाता है। भादो माह सम्बन्धी एक-दो उक्तियाँ प्रायः सही निकली हैं जैसे 'साओन के पुरवा भादो पछिमा जोर, बरदा वेचें, सामी चल देस की ओर' अर्थात् सावन में पुरवैया हवा या भादो में पछुआ हवा तेज हो तो पत्नी अपने स्वामी को बैलों की बिक्री कर दूसरे देस जाने की सलाह देती है। लेकिन कुछ ऐसी भी उक्तियाँ हैं जो न केवल बुजुर्गों की दुद्धिमता या परख की पहचान हैं बल्कि बुजुर्गों की रसिकता का भी द्योतक हैं। यद्यपि आधुनिक युग में इस सूक्ति से शिक्षित समाज में सज्जनों का सहज रूप से सहमत होना सम्भव नहीं है। जैसे 'पुरवा पर जो पछवा बहै, विहंसि राड़ि जो बात करै, एह दोनों के इहै विचार, उ बरसै ई करै भतार' या 'तीतर पंख मेघा उड़े ओ विधवा मुसकाय, कहै डाक सुनु डांकिनि, उ बरसे इ जाए' दोनों उक्तियों का अर्थ सहज है कि पुरवैया हवा के पश्चात् पछवा हवा का मिलाप एवं विधवा औरत का मुस्कुराकर किसी पुरुष से बात करना दोनों को दशा एक समान है अर्थात् बरसने की ज्यादा संभावना है।

विषयान्तर पश्चात् वर्षा की एक-एक बूँद जमा होकर 'समिटि समिटि जल भरहि तलावा' के अतिरिक्त वेग से बहती हुई छोटी-बड़ी नदियाँ नाले अथाह सागर का रूप देती हैं ठीक उसी प्रकार जैसे ज्ञानी जन एक-एक अक्षर के ज्ञान को सिमट-सिमट कर ज्ञान का अथाह भण्डारण कर लेते हैं। क्योंकि बूँद-बूँद से तालाब का ओर तनिक-तनिक से ज्ञान का संपोषण होता है। उतुंग शृंगों से पूर्ण वेग से प्रवाहित अकिंचन नाला भी पहाड़ों के दो आवाँ को चिरते एवं सरकते हुए छोटे-मोटे बाँधों और ब्यारियों को तोड़ कर उन्मुक्त हो अबाध गति से प्रवाहित होता है। तुलसीदासजी कहते हैं—'महादृष्टि चलि फूटि किआरी' जो शत-प्रतिशत सही प्रतीत होता है हालांकि उनके अगले पद 'जिमि सुतंत्र भये विगरहि नारी' से आज का शिक्षित समाज कतई सहमत न होगा। एक बात और है जिसकी चर्चा न करना 'बारहो व्यंजन' में नमक न होने के कारण पकवान का सारा मजा किरकिरा होने जैसा है—वह है 'दादुर धुनि।' 'झूमि झूमि बरसा' से जल 'तालन में सड़ागन में' जमा होते ही नीले-पीले, काले-भूरे, छोटे-बड़े दादुरों का टरं टरं ऐसा लगता है जैसे समवेत स्वर में बटुकगण दिनचर्या में पहाड़ा याद करते हैं। 'बोलने लगे दादुर मयूर लगे नाचै फेरि, देखि के संजोगी जन हिय हरसै लगे' (भारतेन्दु जी)। मजाकिया रसिक गायक तो उसे 'टरं टरं प्यः कैसे धूम मचाये' भी कहने को आतुर है। चाहे वे दादुर का टरं हो या टमाटर या मास्टर का।

किन्तु यह वर्षा ऋतु सभी के लिए सर्वदा प्रसन्नता का पर्याय नहीं है। बादल का गर्जना, बिजली का चमकना, नदी नालों और खेतों का पानी से भर जाना ये सभी सर्वदा सुखद नहीं हैं। इस हवा के साथ

घन पिघल कर वर्षा की पहली बूँदें 'करुणा विगलित अश्रु बहा कर धरती की चिर व्यास बुझाई' से जहाँ मयूर मृत्यु करते हैं, चिहियाँ चहचहाती हैं एवं कृषक प्रसन्नता से नाच उठता है ठीक उसी समय विरही हृदय को ये गर्जन हथौड़े की चोट लगाते हैं 'घन घण्ड नभ गरजत घोरा, प्रियाहीन डरपत मन मोरा' और दामिनी का दमकना खल के वचन 'जैसा अस्थिर या एक-एक बूँद का धरती पर गिरना, खल या दुर्जन के शब्द के समान आघात करना' इत्यादि भगवान राम ने भी महसूस किया था तो आम आदमी इस आघात को कैसे सहन कर पायेगा। अतिवृष्टि से छोटे-छोटे नदी-नालों में पानी भर जाता है कि कगारों को तोड़कर इस प्रकार इतरा जाते हैं जैसे थोड़ा सा घन पाकर खल बीरा जाते हैं और भी, 'कनक कनक ते सौ गुनी मादकता अधिकाय' एक कनक के खाने से एवं दूसरे कनक के पाने से आदमी बीरा जाता है ऐसे हालात में शूद्र नदी के जल प्रवाह घण्टी खलनायक की भाँति कृषकों के सपने और फसलों को वेगि प्रवाह से नष्ट कर, तार-तार कर देते हैं। उनके घरों को 'कन्दुक इव ब्रह्माण्ड उठाऊँ' ऐसा उधाल फेंकते हैं और उनकी आत्मा ठीक वैसे ही भूखी तरसती रह जाती है जैसे पपीहे की दशा स्वाति के बूँद प्राप्त होने से पहले होती है या चकवा चकवी अपने रात्रि-बिछुड़न की विरह वेदना में एक-दूसरे से अलग रह ऊपाकाल के लिए तड़पते हैं किन्तु ऊपाकाल के आते ही चिर प्रतीक्षित अभिषापित रात्रि पश्चात् मिलते ही प्रणय-कलह में बदल जाता है— 'निशाकाल से चिर अभिषापित, बेबस उस चकवा-चकवी का... शीवालों की हरीदरी पर, प्रणय-कलह छिड़ते देखा है।' अर्थात् शत्रु और मित्र समदुखदायी होते हैं, एक मिलने पर एवं दूसरा बिछुड़ने पर कष्ट देता है।

भादो पर्यन्त वर्षा ऋतु की विदाई एवं शरद ऋतु का आगमन हो जाता है। कृषक खेतों में वर्षा की आशा छोड़ देते हैं 'बोली लुखरी फूले कास, अब नहीं बरखा के आस' अर्थात् रात में लोमड़ी की खै-खै की आवाज सुनाई पड़ती है, कास के फूल झिल जाते हैं एवं कृषक अपने खेतों में पानी यानि वर्षा का अभाव महसूस करता है। अन्त में यदि बसन्त को ऋतुराज या रसराज की संज्ञा दी जा सकती है तो पावस ऋतु को सभी ऋतुओं को अनोखेपन का जामा पहनाने का श्रेय प्राप्त है क्योंकि 'नव पल्लव भए विटर अनेका' के द्वारा धरणी शस्य श्यामला होकर प्रकृति को हरीतिमा की चादर ओढ़ा देती है जैसे सावन में अन्धे को भी हरा-हरा ही दिखता है। 'सावन की तो बात निराली चारो तरफ बिछी हरियाली'। ग्रीष्म में हवा के कम दबाव से धूल भरे कण चक्रवात का रूप धारण कर धूल को व्योम में पहुँचा वायुमंडल को प्रदूषित कर देते हैं जो भादों के मूसलाधार वृष्टि में धुल कर जमीं पर आ टपकते हैं एवं वायुमंडल में निखार आ जाता है। साथ ही 'भादों मूसलाधार बहाता खेतों में सब चीज उगाता' विरोधाभास का द्योतक है। फिर भी रात्रि के स्वच्छ नभ में उदित चन्द्रकला से प्रकृति चन्द्रिका की चादर ओढ़ शरद ऋतु का आवाहन ही नहीं करती बल्कि खिसकते हुए वर्षा ऋतु के मार्ग प्रशस्त हेतु अपनी चन्द्रिका का विस्तार करती है।

आषाढ़ मास में काले-काले मेघों का अठखेलियाँ करते हुए उत्तर दिशा में बढ़ना, कालिदास की यक्षिणी के लिए विरह सन्देश सूचक ही नहीं बल्कि हृदय में अंकुरित यक्ष के प्रति प्रेम बीज को आशा रूपी जल से सींचन सूचक है। यक्षिणी की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं क्योंकि उसकी प्रेम वेदनाओं को कम से कम काले-काले मेघ हिमालय सी ऊँचाई पर बसे परदेसी यक्ष तक पहुँचा तो अवश्य ही देंगे।

वन में पुरुषोत्तम श्रीराम भी वर्षा काल में 'मेघ नभ छाये' एवं शरद ऋतु में खंजन के आगमन के साथ चाँदी से चमकने वाली चाँदनी का स्वागत पति के चिर वियोग में होने पर भी कुछ कम नहीं करते 'बरसा विगत शरद ऋतु आई लछुमन देखहु परम मुहाई' सुख और दुःख, ग्रीष्म और वर्षा, एक जीवन चक्र है जो अनवरत अनन्त एवं अबाध गति से चलता रहता है—कभी न रुकने वाली गति से।

“कोऽतिभारः समर्थानां किं दूरं व्यवसायिनाम् ।
को विदेशः सविद्यानां कः परः प्रियवादिनाम् ॥

अर्थात्

“सर्वथा समर्थ अर्थात् योग्य पुरुषों के लिए कोई भी कार्य अत्यन्त
गुरु नहीं होता, व्यवसायी मनुष्यों के लिए कोई स्थान दूर नहीं
होता, विद्वानों के लिए कोई देश, विदेश नहीं होता और प्रिय
वचन बोलने वालों के लिए कोई व्यक्ति पर (दूसरा) अथवा
शत्रु नहीं होता ।”

“विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः ।
यशसि चाभिरुचिर्व्यसनं श्रुतौ प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम् ॥

अर्थात्

“विपत्ति में धीरज, उन्नति में क्षमा-भाव, सभा में वाणी की
चतुरता (वाक्पटुता), युद्ध में वीरता, यश प्राप्ति में विशेष
रुचि, वेदाध्ययन में आसक्ति आदि गुण महात्माओं में स्वभाव से
ही रहा करते हैं ।

हिन्दी को राजनैतिक नहीं, विशाल दृष्टिकोण से देखना चाहिए ।

—प्रभाकर माचवे

हिन्दी में आप अपने विचार ज्यादा आसानी से प्रकट कर सकते हैं ।

राष्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना देश की शीघ्र उन्नति के लिए आवश्यक है ।

—महर्मा गांधी

हिन्दी की होड़ किसी प्रान्तीय भाषा से नहीं, केवल अंग्रेजी से है ।

—डा० राजेन्द्र प्रसाद

हिन्दी सबको सीखनी चाहिए, इसके द्वारा भाव विनिमय से सारे भारत को सुविधा होगी ।

—चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

हिन्दी की परम्परा साम्प्रदायिकता की परम्परा नहीं; एकता, उदारता, सामाजिक समानता और वैयक्तिक स्वतन्त्रता की परम्परा है ।

—रामधारी सिंह 'दिनकर'